चन्दामामा
अगस्त १९७५
1
Re

Photo by: DILIP BANERJE

PICK UP A SHELL

मैं गंदे पैरों से
भला प्लूटो
को अन्दर
कैसे लाता?
HT-HSI 8124 R
अन्तर्राष्ट्रीय गुणमान के
अनुरूप निर्मित सैनेटरीवेयर
और वॉल टाइल्स
VITREOUS
हिन्दुस्तान सैनेटरीवेयर
एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड
२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता ७०० ००१
सोमानी-पिलकिंगटन्स लिमिटेड
कसार, रोहतक, हरियाना

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी

संचालक : 'चक्रपाणी'

इस महीने की बेताल कथा "ज्योतिष का फल" के द्वारा हमें यह विदित होता है कि शास्त्रीय ज्ञान का उपयोग समुचित रूप से करने पर उसके द्वारा उत्तम फल प्राप्त होता है, परंतु स्वार्थी लोग जब उस ज्ञान का दुरुपयोग करते हैं, तब उन्हें क्षमा नहीं करना चाहिए। ऐसे लोगों के ज्ञान का हम भले ही सम्मान करे, किंतु उसके दुरुपयोग के लिए उन्हें दण्ड देना ही चाहिए, अन्यथा स्वार्थ को प्रोत्साहन मिल जाता है।

वर्ष : २८ अगस्त १९७५ अंक : २

मित्र-भेद

[२५]

सिंह नदी में स्नान करने चला गया, उसके जाते ही सियार ने भेड़िये से कहा–"दोस्त! हमारे राजा के आने के पहले तुम चाहे तो ऊँट का थोड़ा सा मांस खा लो! बेचारे, भूखे मालूम होते हो! मैं सिंह को समझा दूँगा।"

सियार के मुँह से ये बातें निकलने की देरी थी, बस, भेड़िये ने ऊँट के कलेजे को खा डाला।

सिंह ने लौटकर देखा, ऊँट का कलेजा गायब है, क्रोध में आकर भयंकर गर्जन करते उसने पूछा–"मुझसे पहले ही किस ने ऊँट का मांस खाया है? मैं उसका वध करके ही अपना भोजन करूँगा।"

भेड़िये ने सियार की आँखों में इस तरह देखा, जिस में यह भाव था–"तुम ने तो सिंह को समझाने की बात कही थी, तुम्हारे भरोसे पर ही मैं ने ऊँटका मांस खाया था, अब तुम्हीं इसका जवाब दो तो सही!" परंतु सियार ने मुस्कुराते हुए कहा–"भेड़िया भाई, मेरी तरफ़ क्या ताकते हो? कलेजा तुम्हीं ने ही तो खाया था?"

भेड़िया एक दम काँप उठा और लगा दौड़ने। सिंह ने बड़ी दूर तक भेड़िये का पीछा किया, तब यह कहते लौट आया–"भेड़िये की इस छोटी सी भूल पर उसको नाहक़ क्यों मार डालूँ!"

सिंह के लौटते समय उसे घंटियों की आवाज़ सुनाई दी। ऊँटों के व्यापारियों का एक दल उस रास्ते से जा रहा था। ऊँटों के कंठों में बंधी घंटियाँ बज रही थीं।

सिंह ने सियार से पूछा–"यह आवाज़ कैसी?"

अंतिम पृष्ठ का चित्र

"महाराज! आप भाग जाइए। आप के सामने बड़ा खतरा उपस्थित होनेवाला है!" सियार ने डराया। "किसके द्वारा खतरा पैदा होनेवाला है? साफ़-साफ़ क्यों नहीं बता देते?" सिंह ने पूछा।

"ऊँट को मारने के पहले आप ने उसे सौ प्रतिशत ब्याज देने का मृत्युदेवता को वचन दिया था। अब ब्याज सहित मूलधन वसूल करने केलिए मृत्युदेवता चला आ रहा है।" सियार ने कहा।

यह खबर सुनते ही सिंह भाग खड़ा हुआ। इसके बाद कई दिनों तक सियार ऊँट के मांस को निस्संकोच व बिना रुकावट के खाता रहा।

*　　*　　*

दमनक के चले जाने पर संजीवक ने यों अपने मन में सोचा:

"अब मेरा कर्तव्य क्या है? क्या कहीं भाग जाऊँ? यह तो महा जंगल है, कोई फ़ायदा नहीं। मुझे किसी बाघ के मुंह का शिकार बन जाना पड़ेगा। सिंह तो मेरा शत्रु बन बैठा है। इसलिए अब मेरे सामने एक ही उपाय है-सिंह के पास जाकर प्राणों की भीख मांगना है!"

यों सोचकर संजीवक पिंगलक के पास पहुंचा। दमनक के कथनानुसार सिंह पहले से ही पूंछ उठाये था। उसके पंजे कसे हुए

थे, उसकी आँखें तीक्ष्ण थीं। ये सारे लक्षण दूर से ही भांपकर संजीवक ने सींग मारने की मुद्रा में अपने सींगों को आगे की ओर बढ़ाया।

पिंगलक ने भी दमनक के बताये लक्षण संजीवक में देखा, फिर क्या था, उस पर आक्रमण करके अपने तेज नाखूनों से संजीवक को चीर डाला। चोट खाकर भी संजीवक ने पिंगलक की बगल में सींग मारा, थोड़ा पीछे आकर फिर सींग मारने को तैयार हो गया।

इस प्रकार वे दोनों परस्पर एक दूसरे को मारने के लिए लड़ने तैयार हो गये; इसे देख करटक ने दमनक से कहा-"अरे दुष्ट!

तुमने मित्रों के बीच शत्रुता पैदा करके महान पाप किया है। शांतिपूर्ण इस जंगल में तुमने अशांति पैदा की। तुमने एक साथ दण्डोपाय का सहारा लेकर हमारे शासक के प्राणों को खतरे में डाल दिया है। उन्हें दूसरों के साथ मंत्रणा करने का मौक़ा तक दिये बिना तुमने ही सारी मंत्रणा की। तुम जैसे मूर्ख की मंत्रणा सुननेवाले हमारे राजा के प्रति मैं तरस खाता हूँ। इसमें हमारे राजा की भी भूल है। मूर्ख राजा तुम जैसे स्वार्थी लोगों की बातों में आकर अपना विनाश मोल लेते हैं। तुम जैसे दुष्ट के हित वचन सुनाना भी बेकार है। अगर सुनाऊँ तो वह बंदर को सुनाये जानेवाले हित वचन जैसा ही होगा!"

"हित की वह कैसी कहानी है?" दमनक ने पूछा। करटक ने यों सुनाई:

व्यर्थ हित

एक जंगल में बंदरों का एक दल था। जाड़े के मौसम में सारे बंदर कांप रहे थे। उस समय उन्हें एक जुगनू दिखाई दिया। बंदरों ने सोचा कि वह एक अंगारा है। उसकी मदद से आग सुलगाना चाहा। इसलिए जुगनू को पकड़कर उस पर सूखे पत्ते डाल दिये और हाथ सेंकने उसके चारों ओर बैठ गये।

एक बंदर सर्दी से ज्यादा परेशान था। उसने जल्दी आग सुलगाने के ख्याल से जुगनू पर फूंकना शुरू किया। समीप के एक वृक्ष पर बैठे सूचीमुखी नामक एक पक्षी ने इस दृश्य को देख समझाया— "दोस्त! तुम बेकार क्यों श्रम उठाते हो। वह अंगारा नहीं बल्कि जुगनू है।"

पर बंदर ने उसकी बात पर कोई ध्यान न दिया बल्कि वह बराबर फूंकता ही जा रहा था।

सूचीमुखी ने बंदर को बार-बार समझाया। बंदर ने गुस्से में आकर सूचिमुखी को मुंह बंद करने की धमकी दी। लेकिन फिर भी मूर्ख सूचीमुखी बंदर को हित वचन सुनाती ही रही।

विचित्र जुड़वाँ

[१२]

[उदयन तथा उसके दो जुड़वें भाइयों ने पहरा देनेवाले राक्षस को मार डाला, तब उसके भाई ने आकर उन्हें पकड़ना चाहा, इस पर वे बंदर बनकर भाग गये। उस वक्त दाढ़ीवाला आ पहुँचा और जुड़वें भाइयों के हाथों में फंस गया। उदयन ने बड़े राक्षस का वध करना चाहा, पर उसने उदयन को कुएँ में ढकेल दिया। इसके बाद–]

राक्षस उदयन को कुएँ में ढकेल कर अपने रास्ते आप चला गया। दाढ़ीवाले के रूप में स्थित उदयन एक हफ़्ते तक लाचार होकर कुएँ में ही पड़ा रह गया। उसे बाहर निकलने का कोई उपाय न सूझा। उधर भस्म के द्वारा अदृश्य हुए संध्याकुमार, निशीथ तथा दाढ़ीवाला भी उसी रूप में रह गये। क्योंकि उन्हें पूर्व रूप दिला सकनेवाला भस्म उदयन के पास ही रह गया था। इसलिए वे लोग भी चिंता के मारे अत्यंत परेशान थे।

उधर राजकुमारियों ने जुड़वें भाइयों को न पाकर सोचा कि जुड़वें भाई अवश्य किसी विपदा में फंस गये होंगे, वे भी घबरा गईं और चारों तरफ़ उनकी खोज करना शुरू किया।

जुड़वें भाइयों की खोज करते राजकुमारियाँ उस कुएँ के निकट भी

पहुँचीं जिस में उदयन को गिराया गया था। मगर उदयन दाढ़ीवाले की आकृति में नाटा था, इसलिए उन्हें वह दिखाई न दिया। उनके कुएं के पास आने की आहट पाकर उदयन पुकार उठा, मगर उसकी पुकार भी उसकी आकृति के अनुरूप पतली थी। इस कारण राजकुमारियों को सुनाई न दी।

उदयन यह सोचकर बड़ा दुखी हुआ कि वह पुकार कर भी उन्हें अपनी दयनीय हालत का परिचय नहीं दे पाता। मगर उसी क्षण उदयन को एक बात याद आई।

राक्षस ने उदयन को कुएँ में ढकेलने के बाद किनारे पर पड़ी तलवार को भी कुएँ भी गिरा दिया था। अब उदयन ने कुएँ में से उस तलवार को निकाल कर ऊपर फेंक दिया। वह तलवार कुएँ के बाहर एक जगह धंस गई। उदयन का यह विचार था कि कम से कम उस तलवार को देख राजकुमारियाँ यह भांप लेंगी कि वह कुएँ में है। लेकिन राजकुमारियों ने शीघ्र तलकार को पहचाना नहीं।

एक हफ़्ते के बाद राजकुमरियाँ पुन: उस कुएँ के पास आईं। कुएँ के जगत के पास ज़मीन में धंसी तलवार को देख वे चकित रह गई। "अरी, यह कैसे आश्चर्य की बात है! पिछली बार जब हम यहाँ पर आई, उस वक़्त यह तलवार न थी, अब कहाँ से आ गई? कहीं राक्षस ने उदयन को मार कर इस कुएँ में तो डाल नहीं दिया?" यों सोचते राजकुमारियों ने कुएँ में झांककर देखा।

आश्चर्य की बात यह थी कि कुएँ का आधा भाग फलों से भरा हुआ था। उन पर दाढ़ीवाले की आकृति में उदयन खड़ा हुआ था। उसके हाथ में जादू का तौलिया था, तौलिये में से फलों के ढेर निकल आ रहे थे; फलों से कुआँ भरता जा रहा था।

विस्मय के साथ राजकुमारियाँ ज्यों की त्यों खड़ी रह गई। थोड़ी देर में कुएँ के

ऊपरी किनारे तक फल आ गये। इस तरह सारा कुआँ भर गया। उन फलों के ढेर पर खड़े उदयन का हाथ पकड़ कर राजकुमारियों ने उसे बाहर खींच दिया।

उदयन ने राजकुमारियों को सारा वृत्तांत सुनाया कि उसने राक्षस का सिर कैसे काट दिया। राक्षस ने उसको कुएँ में कैसे फेंक दिया? इस पर उसने क्या क्या योजनाएँ बनाईं, उदयन के मुंह से सारी बातें सुन कर राजकुमारियों ने कहा–"चाहे जो हो, जादू के तौलिये ने तुम्हारी रक्षा की है। इस बात के लिए हम तुम्हारी प्रशंसा करना चाहती हैं कि जादू के तौलिये को काम में लाने का उपाय समय पर तुम्हें सूझा। वरना तुम सदा के लिए इस कुएँ में ही रह जाते!"

इसके उपरांत सब लोग उस जगह पहुँचे जहाँ पर दाढ़ीवाला, संध्याकुमार और निशीथ अदृश्य रूप में थे। उदयन ने अपने हाथ का भस्म छिड़क दिया जिससे वे तीनों अपने पूर्व रूप को प्राप्त हुए।

सारा समाचार जानने के बाद दाढ़ीवाले ने कहा–"तब तो राक्षस ने यही सोचा है न कि उसने मुझको ही कुएँ में गिरा दिया है? एक प्रकार से यह भी ठीक है। अब हमें आगे का समाचार जान लेना है।"

इस पर उदयन ने कहा–"तुम्हारा कहना सही है! पर इस बार जब राक्षस आएगा, वह मेरे वास्ते कुएँ में झांककर देखेगा तब मुझको कुएँ में न पाकर, उल्टे फलों से कुएँ को भरा देख क्या वह संदेह न करेगा?"

"उसके लौटने तक कुआँ वहाँ पर हो, तब न?" दाढ़ीवाले ने कहा।

दूसरे क्षण सब ने कुएँ के पास जाकर भस्म छिड़का दिया तो कुआँ गायब हो गया और उसकी जगह एक साधारण मैदान दिखाई दिया।

उदयन ने दाढ़ीवाले से कहा–"सुनो, तुम्हें हमारी एक सहायता करनी है।
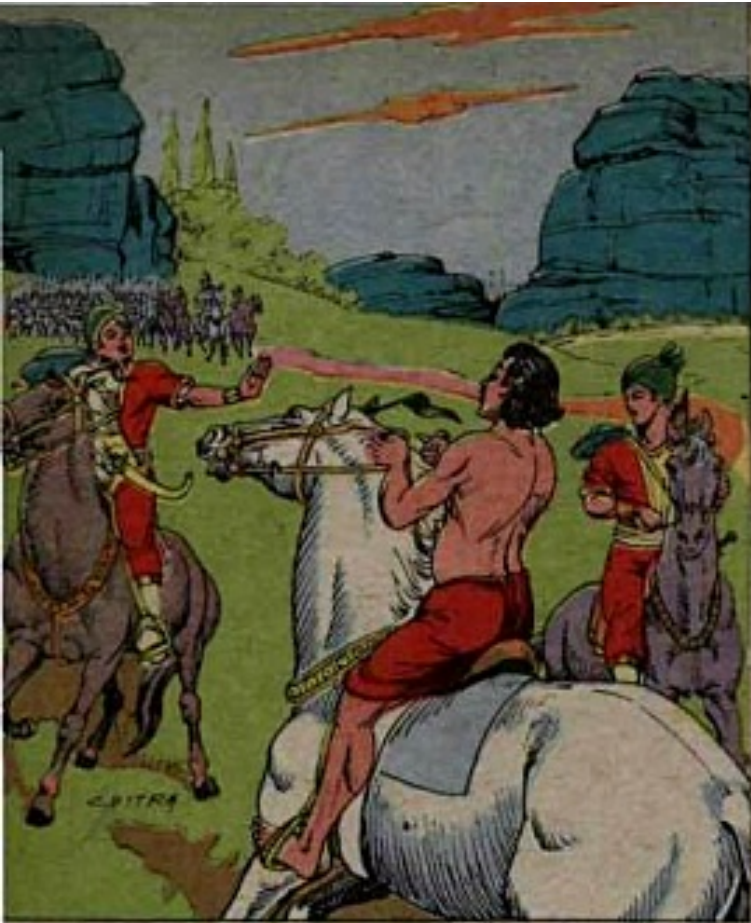
राजकुमारियों की खोज में निकले हमारे सात वर्ष बीत गये। उधर राजा और रानी हमारे बारे में परेशान होंगे। इसलिए तुम इसी क्षण श्रावस्ती नगर के लिए रवाना हो जाओ, राजा को यह समाचार सुनाओ कि हम तथा राजकुमारियाँ कुशल हैं और यथाशीघ्र घर लौटनेवाले हैं, तब तुम विलंब किये बिना शीघ्र लौट आओ।"

दाढ़ीवाला उदयन की बात मानकर उसी क्षण श्रावस्ती नगर के लिए रवाना हुआ। उस समय उदयन ने उसे समझाया कि सर्व प्रथम वह इस जादू के महल में प्रवेश करने के पूर्व कैसे कंदक में गिर गया और किस प्रकार वह अपने घोड़े को उसी कंदक में छोड़ अकेले बाहर आया, यह सारा वृत्तांत सुनाकर तब बोला– "तुम पैदल चले जाओगे तो कब तक पहुँचोगे? इसलिए तुम शीघ्र मेरे घोड़े पर हो आओ; संभवतः वे लोग तुम पर विश्वास न करेंगे, किन्तु इस घोड़े को पहचानने के बाद जरूर तुम पर विश्वास करेंगे।"

इसके उपरांत दाढ़ीवाला उदयन के सफ़ेद घोड़े पर रवाना हुआ। थोड़ी दूर जाने पर एक मैदान में महाराजा दानशील के सेवक संध्याकुमार तथा निशीथ के घोड़ों पर सवार हो चले आये। अपने राजा के सफ़ेद घोड़े को देखते ही उसे पहचान लिया। उस पर किसी नये व्यक्ति को सवार हुए देख उसको रोका।

"महाशय! तुम कौन हो? तुम्हें यह घोड़ा कैसे प्राप्त हुआ? तुम इधर कहाँ जा रहे हो? अपना सारा वृत्तांत सुनाकर तब आगे बढ़ो!" सेवकों ने कहा।

इसपर दाढ़ीवाले ने यों जवाब दिया– "मैं महाराजा दानशील को एक शुभ-समाचार सुनाने जा रहा हूँ। हाँ, मुझे तो ऐसा लगता है कि मैंने इसके पहले ये घोड़े कहीं देख लिये हैं। तुम लोग

महाराजा दानशील के कर्मचारी तो नहीं हो?"

"हाँ, हाँ भाई! पहले यह बताओ कि तुम कौन सा शुभ समाचार लाये हो?" राजा के सेवकों ने उत्सुकता दिखाई।

"राजकुमारियाँ तथा उनकी खोज में आये हुए युवक, सब कुशल पूर्वक हैं। यह समाचार राजा से निवेदन करना है।" दाढ़ीवाले ने कहा।

"ओह, ऐसी बात है। चलो, तब हम भी तुम्हारे साथ चलते हैं!" सेवकों ने प्रसन्नता पूर्वक कहा।

"यह ठीक नहीं। हम लोग एक काम करेंगे। हम सब मिलकर अब राजकुमारियों के पास जायेंगे। तुम लोग वहीं रहकर उनकी रक्षा करते रहो। मैं वहाँ से लौटकर राजा को यह समाचार पहुँचा दूँगा, तब लौटूँगा।" दाढ़ीवाले ने सुझाया।

इसके बाद सब मिलकर जुड़वें भाइयों के पास पहुँचे। सेवकों को वहाँ पर छोड़ दाढ़ीवाला पुनः रवाना हुआ।

थोड़ी दूर जाने पर बवंडर उठा। राक्षस के आने का यह निशान था। यह बात भांपकर दाढ़ीवाला घोड़े को तेजी के साथ हांकने लगा, फिर भी राक्षस कहीं से तूफ़ान की भांति आ

धमका और घोड़े पर सवार दाढ़ीवाले को आकाश के मार्ग में उड़ा ले गया।

घोड़ा घूमते-घूमते एक हफ्ते में श्रावस्ती नगर जाकर राजमहल में पहुँचा। राजा ने घोड़े को देखते ही आगे बढ़कर उसका स्वागत किया और उसको राजमहल के भीतर ले जाने को हुआ। पर घोड़े ने राजमहल में प्रवेश नहीं किया, बल्कि हठ करके उसी रास्ते से लौट जाने लगा, जिस रास्ते से वह लौटा था।

उस समय वहाँ पर सारे सेवक जमा हुए। राजा ने उन्हें आदेश दिया–"मेरी समझ में नहीं आता कि उदयन का क्या हाल है? यह घोड़ा यहाँ पर कैसे आ पहुँचा? इसकी चेष्टाओं को देखने पर मुझे संदेह होता है कि वे लोग किसी खतरे में फंसे हुए हैं। यह घोड़ा राजमहल में प्रवेश किये बिना उसी रास्ते से लौटने को हठ कर रहा है, इसके पीछे कोई न कोई रहस्य ज़रूर होगा। इसलिए तुम लोग चुपचाप इसके पीछे चले जाओ, और देख आओ कि क्या होता है।"

राजा यों समझा रहा था, तभी घोड़ा छूटकर आगे जाने लगा। राजसेवकों ने उसका अनुसरण किया। इतने में आगे बढ़नेवाला घोड़ा राजसेवकों की ओर मुड़ा और इस तरह सिर हिलाया, मानो यह कह रहा हो कि तुम लोग ठहर जाओ।

इस संकेत को देखते ही राजा के मन में एक विचार आया। उसने मंत्री को बुलाकर कहा–"लगता है कि इन सबका घोड़े का पीछा करना उसे पसंद नहीं है। इन लोगों को वापस भेजकर तुम अकेले इसके पीछे चले जाओ।" इन शब्दों के साथ राजा ने मंत्री को घोड़े के पीछे भेज दिया।

राजसेवकों को वापस बुलवा लेने पर घोड़ा फिर आगे बढ़ा। तब मंत्री अकेले ही घोड़े का अनुसरण करते उसके पीछे चला।

* * *

उधर जुड़वें भाई तथा राजकुमारियाँ भी अत्यंत व्याकुल रहने लगीं। दाढ़ीवाले के श्रावस्ती नगर में समाचार देने गये दस दिन व्यतीत हो चुके हैं, पर अब तक वह लौट न आया। इस कारण जुड़वें भाई अनेक प्रकार की कल्पनाएँ करने लगे।

आखिर एक दिन उदयन ने अपने भाइयों से कहा–"बेचारा न मालूम दाढ़ीवाला किस विपदा में फँस गया है? मैं श्रावस्ती जाकर उसका समाचार लाऊँगा। तब तक तुम लोग सावधान रहो। ज़रूरत पड़ने पर इन भस्मों का उपयोग करो।" इन शब्दों के साथ उन्हें थोड़ा सफ़ेद भस्म तथा थोड़ा काला भस्म दिया। तब वह निशीथ के काले घोड़े पर श्रावस्ती नगर की ओर चल पड़ा।

उदयन अपनी यात्रा के दौरान एक राज्य से होकर जा रहा था। रास्ते में एक अंधा आदमी लाठी के सहारे टटोलते चलते हुए निकट के एक गड्ढे में गिर पड़ा। इस दृश्य को देखते ही उदयन झट से घोड़े पर से कूद पड़ा और उस अंधे को गड्ढे में से निकाला। उस पर अपने अंजनों का भी प्रयोग किया। दूसरे ही क्षण अंधे को दृष्टि आई। उसने उदयन के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की

और उसे अपने घर चलने की प्रार्थना की। उदयन ने मान लिया।

घर पहुँचने पर उदयन को मालूम हुआ कि वह वृद्ध उस नगर के राजा के सेवक का पिता है। अपने पिता के पुनः दृष्टि पाने पर वह सेवक बड़ा प्रसन्न हुआ। फिर क्या था, मिनटों में यह खबर सारे नगर में फैल गई, आखिर राजा के कानों में भी यह खबर पड़ी।

राजा ने अपने सेवकों को भेज कर उदयन को सादर बुला भेजा। उदयन जब राजदरबार में पहुँचा, तब राजा ने अनेक प्रकार से उसका सत्कार करके कहा–"मैंने तुम जैसे प्रतिभाशाली को

आज तक नहीं देखा है। तुम मेरे दरबार में ही रह जाओ।"

इसके उत्तर में उदयन ने कहा– "महाराज, आपने मेरे प्रति जो आदर एवं वात्सल्य दिखाया है, उसे मैं कदापि भूल नहीं सकता। परंतु मैं एक खास कार्य पर इस वक़्त जा रहा हूँ। उसकी पूर्ति करके लौटती यात्रा में मैं अवश्य आप के दर्शन करूँगा।"

राजा ने प्रसन्नता पूर्वक उदयन को विदा किया। इसके उपरांत रास्ते में किसी भी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के बिना दूसरे हफ़्ते तक उदयन श्रावस्ती नगर में पहुँचा।

राजा ने उदयन को देखते ही आगे बढ़कर उससे गले लगाया। उदयन ने राजकुमारियों के कुशल-क्षेम का समाचार सुनाया। राजा जब थोड़ा-बहुत आश्वस्त हुआ, तब उदयन ने सविस्तार सारा वृत्तांत सुनाया, तब हिम्मत बंधाते हुए कहा–"महाराज, आप निश्चित रहिए। हम आपकी पुत्रियों के साथ सकुशल यथा शीघ्र लौट आयेंगे।"

उदयन के मुँह से यह आश्वासन पाकर राजा का हृदय उछल पड़ा। रानी का मुखमण्डल दमक उठा। राज्य की प्रजा आनंद के सागर में गोते लगाने लगी।

दूसरे दिन प्रातः काल उदयन ने राजा से आज्ञा ली, अपनी माता के आशीर्वाद प्राप्त किया, तब जादू के महल की ओर चल पड़ा।

एक सप्ताह के अंदर उदयन जादू के महल के निकट पहुँचा। किंतु उसने वहाँ पर जो दृश्य देखा, उससे उसका सारा शरीर कांप उठा। ऐसे भयंकर दृश्य को उसने कभी न देखा था।

उद्यान में एक बृक्ष से फांसी के पांच फँदे लटक रहे हैं। संध्याकुमार, निशीथ, दाढ़ीवाला तथा श्रावस्ती से आये दो राज सेवक अब एक पंक्ति में बैठे हुए हैं। उन सब के हाथ-पैर बंधे हुए हैं, सामने राक्षस शेर की भांति खड़ा हुआ है। (और है)

ज्योतिष का फल

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, शक्तियाँ रखनेवाले लोगों के भी इस संसार में अपमानित हो जाने की संभावना है। इसके प्रमाण स्वरूप मैं तुम्हें विष्णुशास्त्री की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीनकाल में वंग देश पर राजा चन्द्रवर्मा शासन करता था। वह युवक था, पर शासन कार्यों में अत्यंत पटु था। मगर चन्द्रवर्मा की दुर्बलता यह थी कि वह ज्योतिष के पीछे पागल था। कोई भी ज्योतिषी उसके देश में प्रवेश करता, उसे बुलवाकर अपनी जन्मपत्री दिखाता, उसके मुँह से जो कुछ निकलता, उस पर विश्वास करता।

बेताल कथाएँ
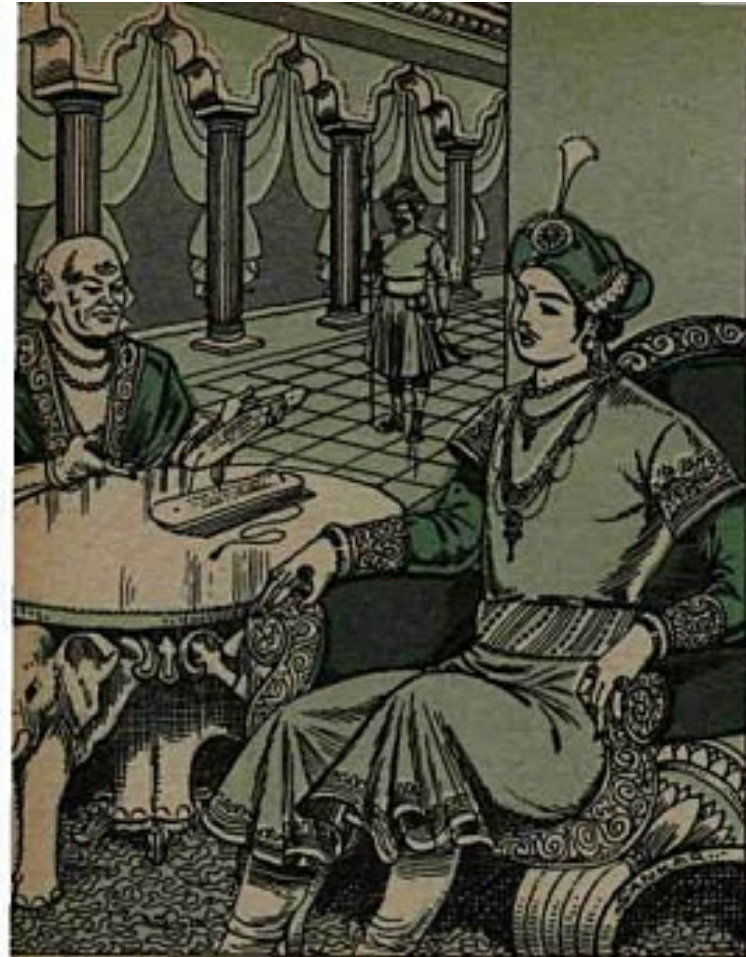
एक दिन चन्द्रवर्मा के दरबार में विष्णुशास्त्री नामक एक ज्योतिषी आया। राजा चन्द्रवर्मा ने उसका स्वागत किया और अपनी आदत के अनुसार उसे अपनी जन्मकुंडली दिखाई।

विष्णुशास्त्री ने राजा की जन्मकुंडली शोध कर कहा—"राजन, यह लोकोक्ति जनता में प्रचलित है कि सच्चे ज्योतिषी को संकोच नहीं करना चाहिए। इसलिए मैं यथार्थ बता देता हूँ। आज से ठीक अट्ठारह वर्ष बाद इस देश में भयंकर अकाल पड़ेगा। वह अकाल केवल एक वर्ष तक रहेगा। मगर अकाल के दूर होने के दो वर्ष बाद आप के अंधे हो जाने का खतरा है! इस सत्य के उद्घाटन पर आप कृपया नाराज़ न होइएगा!"

"महानुभाव, क्या उस खतरे से बचने का कोई उपाय नहीं है?" राजा ने पूछा।

विष्णुशास्त्री ने थोड़ी देर तक गिनती की, फिर कहा—"राजन, इस से बचने का एक उपाय है, पर यह बात आप कृपया किसी पर प्रकट न करें। एक विकृत आकृतिवाला मांत्रिक बिना बुलाये आप के दरबार में आ सकता है। उसके मंत्रबल से आप का खतरा दूर हो सकता है।"

राजा ने विष्णुशास्त्री का उचित रूप में सत्कार करके विदा किया।

इसके अट्ठारह वर्ष बाद विष्णुशास्त्री के कथनानुसार देश भर में भयंकर अकाल पड़ा। मगर राजा ने पहले से ही पर्याप्त सतर्कता बरती थी, इस कारण अकाल मृत्यु से लोग बच रहें। दूसरे साल अच्छी बरसात हुई, देश फिर से संपन्न हो उठा। अकाल के मुंह में जाने से रोकने के लिए राजा ने जो पूर्व तैयारियाँ की थीं, उनकी जनता ने हृदय से तारीफ़ की।

मगर राजा के मन में यही चिंता सवार थी कि जिस ज्योतिषी ने अट्ठारह वर्ष बाद पड़नेवाले अकाल का सही परिचय दिया है तो आँखों के खतरे का भी सही परिचय दिया होगा। इसलिए राजा विकृत आकृति

वाले मांत्रिक का इंतजार करने लगा। इस बीच राजा चन्द्रवर्मा के यहां लगभग एक ही समय कलिंग राजा तथा काश्मीर राजा के यहां से एक ही प्रकार के समाचार मिले। वे समाचार थे–उनके प्राणों का खतरा था, इस पर वरुणशास्त्री नामक एक विकृत आकृतिवाले मांत्रिक ने जप, तप एवं होम करके उन्हें एक मंत्रपूत कंगण दिया, अब खतरे की अवधि बीत चली है, पर कोई खतरा नहीं हुआ है।

कलिंग राजा ने आगे यों लिखा था: "मैं ने वरुणशास्त्री को अपने दरबार में ही रह जाने का अनुरोध किया, मगर उसने नहीं माना। उसने यह भी कहने से साफ़ इनकार कर दिया कि वह किस देश का निवासी है। परंतु हमने अपने गुप्तचरों के द्वारा पता लगाया है कि वह आप ही के देश का निवासी है। इस लिए आप ऐसे मांत्रिक की मदद से अपने नयनों के खतरे से बच सकते हैं।"

उन पत्रों को देखने के बाद चन्द्रवर्मा ने मन में सोचा–"वरुणशास्त्री शीघ्र ही उस देश में प्रवेश करेगा।"

राजा चन्द्रवर्मा की कल्पना सच निकली। एक सप्ताह के अन्दर वरुणशास्त्री आ पहुँचा। उसकी अवस्था पच्चीस वर्ष की होगी। देखने में मोटा, काला, लंबे दांत, भद्दा था।

राजा चन्द्रवर्मा ने उचित रूप में उसका सत्कार करके अपनी जन्मकुंडली उसके

"मेरे बचपन में ही मेरे पिता का देहांत हो गया है!" वरुणशास्त्री ने कहा।

"ओह! ऐसी बात है! आप जैसे प्रतिभाशाली का जन्म देनेवाले भाग्यवान न मालूम किस लोक में हैं! आप एक काम कीजिए! आप अपने पिता के श्राद्ध के पहले ही यहाँ पर आ जाइए। उनका श्राद्ध इस बार अत्यंत वैभव पूर्वक मनायेंगे, तब आपको भेंट-पुरस्कार वगैरह दूंगा।" राजा ने कहा।

इस पर वरुणशास्त्री ने कहा–"मेरे पिताजी का श्राद्ध तो परसों ही है। इसीलिए मैं घर जाने की जल्दी में हूँ।"

"तब तो आप को अपने घर जाने की जरूरत नहीं। यहीं पर ठाठ से श्राद्ध मना कर नगर के समस्त ब्राह्मणों को दावत खिलायेंगे। परसों शाम को आपका अभिनंदन भी होगा। आप के सभी रिश्तेदारों को बुलवा लेंगे।" राजा चन्द्रवर्मा ने कहा।

राजा ने विष्णुशास्त्री को बुला भेजा, उसे वरुणशास्त्री का परिचय कराकर कहा–"आपने बीस वर्ष पूर्व मुझे नयनों के खतरे की जो बात कही थी, उससे मुझे मुक्त करनेवाला मांत्रिक यही है। आज ही इनके पिता का श्राद्ध है। भारी पैमाने पर श्राद्ध कर्म संपन्न करके इनके पिता की आत्मा को शांति प्राप्त होने के हेतु में

हाथ दे दी। जन्मकुंडली का परिशीलन करके वरुणशास्त्री ने कहा–"राजन, आप को सूर्योपासना तथा कुछ अन्य प्रकार के जप करने हैं। क्योंकि आप के नेत्रों के लिए शीघ्र ही बहुत बड़ा खतरा है। फिर भी मैं आप को उस खतरे से बचा सकता हूँ।"

चन्द्रवर्मा ने वरुणशास्त्री के कथनानुसार सारा कार्य संपन्न किया। इस पर वरुणशास्त्री ने राजा से पूछा–"राजन, आप मुझे जो कुछ पुरस्कार देना चाहे सो दे दीजिए। मुझे जाना है।"

राजा ने वरुणशास्त्री से पूछा–"आप के पिता कौन हैं? उनका धंधा क्या है?"

इनका सत्कार कर रहा हूं। मैं समझता हूं कि इस संदर्भ में आप का भी सम्मान करना समुचित होगा।"

राजा की बातें सुनने पर विष्णुशास्त्री के चेहरे पर संतोष की रेखाएं नहीं फूटीं।

दुपहर हो गई। श्राद्ध-कर्म का अधिकांश कार्यक्रम समाप्त हो चुका था, अब केवल पिंड प्रदान का कार्य शेष था। विष्णुशास्त्री चिल्ला उठा—"अब बंद कर दो।"

राजा चन्द्रवर्मा ने सारा कार्यक्रम रोक दिया और कहा—"इस वरुणशास्त्री को एक महीने तक कारागार में डाल दो। आज से मैं विष्णुशास्त्री को ज्योतिषी बताने के अधिकार से वंचित कर रहा हूं। अभी सारे देश में यह ढिंढोरा पिटवा दो कि कोई भी व्यक्ति विष्णुशास्त्री के ज्योतिष पर विश्वास न करें।"

उस दिन शाम को चन्द्रवर्मा ने विष्णुशास्त्री को सौ स्वर्ण मुद्राएं देकर विदा किया। चलते वक़्त विष्णुशास्त्री ने राजा चन्द्रवर्मा की कुशाग्रबुद्धि तथा उदारता की प्रशंसा की।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, विष्णुशास्त्री श्राद्ध को रोकने के लिए क्यों कर चिल्ला उठा? चन्द्रवर्मा ने विष्णुशास्त्री को ज्योतिषी के रूप में जीने पर प्रतिबंध क्यों लगाया? अपने मंत्र-बल से

राजा के नयनों के खतरे की-रक्षा करनेवाले वरुणशास्त्री को एक महीने का कारावास दण्ड क्यों सुनाया? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया: "यह बात स्पष्ट है कि वरुणशास्त्री विष्णुशास्त्री का पुत्र है। प्रखरबुद्धिवाले चन्द्रवर्मा ने यह बात ताड़ ली और इसे साबित करने के लिए ही यह चाल चली। उसकी चाल चल गई। राजा के इस प्रकार संदेह करने का कारण कलिंग तथा काश्मीर के राजाओं के पत्र ही होंगे। राजा के नयनों के खतरे के बारे में

वरुणशास्त्री ने उन्हें बताया होगा। परंतु वरुणशास्त्री ने तब तक राजा चन्द्रवर्मा तथा उसकी जन्म कुंडली को भी देखा न था। वरुणशास्त्री को राजा के नयनों के खतरे की बात विष्णुशास्त्री ने बताई होगी! वैसे वरुणशास्त्री ने अनेक अपराध किये हैं: पहली बात अपने पिता को गोलोकवासी बताया, दूसरी मांत्रिक के रूप में अभिनय करना। वह सबके खतरों को दूर करने के लिए देवता थोड़े ही है? वास्तव में यदि वह महान शक्तियां रखता है तो वह किसी भी दरबार में रहने से इनकार न करता। जिस राज्य में उसकी ख्याति नहीं, ऐसे राज्य चन्द्रवर्मा के देश में रहना न चाहेगा, वह अपने देश का परिचय देने में भी इनकार न करता। इसलिए वह दण्ड पाने योग्य है। अब विष्णुशास्त्री की बात रही। इस में संदेह नहीं कि विष्णुशास्त्री एक अच्छा ज्योतिषी है। उसने अनेक वर्षों वाद पड़नेवाले अकाल और उसकी अवधि का भी सच्चा परिचय दिया। मगर उसने अपने ज्योतिष की आड़ में अपने अयोग्य पुत्र को छोटी अवस्था में ही जीविकोपार्जन का मार्ग दिखाना चाहा। इसके लिए वह दूर देशों में गया। वहां के राजाओं को भविष्य में होनेवाले झूठमूठ के खतरे बताये और अपने पुत्र को भेजा। इसलिए वह ज्योतिषी के रूप में जीने का हक़ खो बैठा। फिर भी उसकी वास्तविक प्रतिभा पर प्रसन्न हो चन्द्रवर्मा ने उसे छोटा पुरस्कार प्रदान किया। विष्णुशास्त्री ने राजा की प्रशंसा इसलिए की कि एक तो राजा ने वास्तविक रहस्य का पता लगाया, दूसरी बात उसके अपराध करने पर भी राजा ने उसके प्रति सहानुभूति दिखाई। साथ ही उसके पुत्र के अपराधों को देखते हुए भी राजा ने उसे जो दण्ड दिया, वह थोड़ा ही है। यह बात भी उसने भांप ली होगी।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

अपराध का निर्णय

विशाल नामक देश पर राजा शतानन राज्य करता था। उसका विचार था कि राज्य के प्रत्येक नागरिक को समुचित न्याय मिलना चाहिए। यह बात राजा ने अपने मंत्री बृहन्मति से बताई, पर बृहन्मति ने इसे असंभव बताया।

उस जमाने में रघुनाथ नामक एक बहुत बड़ा शास्त्रवेत्ता था। वह अनेक अद्भुत प्रयोग किया करता था। कभी किसी अपूर्व वस्तु का आविष्कार करता तो उसे विभिन्न देशों के राजाओं को दिखा कर पूछता–"इस वस्तु के द्वारा आप का कोई उपयोग हो तो काम में ला सकते हैं।" इन शब्दों के साथ उस वस्तु के प्रयोग की विधि भी बता देता। राजा शतानन ने इस रघुनाथ से भी अपना विचार एक संदर्भ में बताया था।

एक बार रघुनाथ विशाल देश में आया। राजा शतानन के दर्शन करके उसे एक पेटी दी। उस पेटी में एक छोटा यंत्र था। उस यंत्र के संबंध में रघुनाथ ने राजा से यों कहा :

"महाराज! आपने बहुत समय पूर्व मुझसे सही न्याय-निर्णय का उपाय पूछा था। मैंने उस दिन से अनेक प्रयोग करके यह यंत्र तैयार किया है। यह यंत्र मानव शरीर के कंपन के आधार पर काम करता है। देखिए, इसमें एक कांटा है, शून्य से लेकर दस तक के अंक हैं। कोई भी मनुष्य इस यंत्र को धारण करके बातचीत करता है, तब यह कांटा साधारणतः चार अंक को पार करके नहीं जाता। यदि कांटे ने चार को पार कर लिया तो समझ लीजिए कि वह व्यक्ति झूठ बोल रहा है। इसके आधार पर

मानिक चन्द
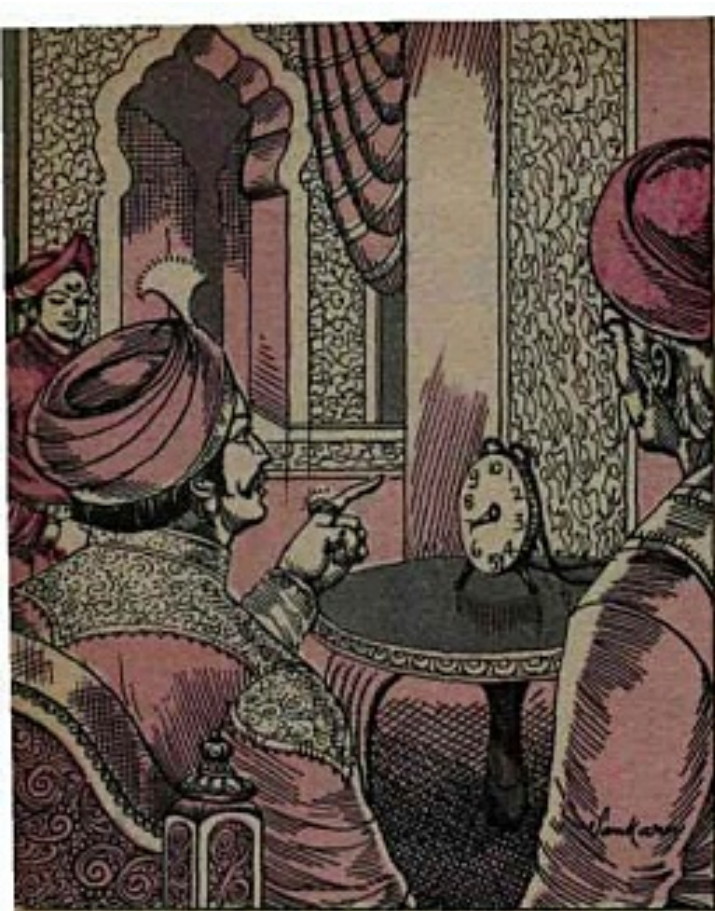
न्यायाधिकारी यह निर्णय कर सकते हैं कि अपराधी माने जानेवाला व्यक्ति वास्तव में सच बोल रहा है या झूठ?"

रघुनाथ की बातें सुन मंत्री बृहन्मति ने कहा–"महाशय! अपराध तो मानसिक प्रवृत्ति से संबंधित है। यह यंत्र केवल भौतिक शरीर में होनेवाले परिवर्तनों को ही मापता है। इसलिए मेरा संदेह है कि इसकी सहायता से सही अपराध का निर्णय संभव नहीं है।"

रघुनाथ ने मुस्कुरा कर कहा–"शरीर के भीतर मन जो अत्यंत सूक्ष्म कंपन पैदा करता है, उन्हें भी यह यंत्र पकड़ सकता है। अपराध तो मन से संबंधित है, फिर भी अपराधी के मन के अनुरूप उसके शरीर में कंपन होते रहते हैं। इसलिए मेरा दावा है कि सही अपराध का निर्णय करने के लिए पूर्ण रूप से इस यंत्र पर निर्भर हो सकते हैं। चाहें तो आप इस यंत्र की परीक्षा लीजिए।"

राजा तथा मंत्री ने यंत्र की परीक्षा करके देखा। राजा झूठ बोला तो कांटा सातवें अंक पर चला गया। मंत्री के झूठ बोलने पर पांचवें अंक पर कांटा जा रुका।

"ओह! यह एक अद्‌भुत यंत्र है!" राजा ने कहा।

पर मंत्री ने अपना संदेह प्रकट किया–"जिस कांटे ने राजा के लिए सातवां अंक दिखाया और मुझे तो पांचवां अंक। ऐसी हालत में इसकी क्या गैरंटी है कि वही कांटा किसी और के लिए दूसरा नंबर का अंक न दिखाएगा?"

इस पर रघुनाथ ने खीझ कर कहा–"इस यंत्र के संबंध में मेरे मन में कोई संदेह नहीं है। आप जितनी बार चाहें, उतनी बार इसकी परीक्षा ले सकते हैं।"

राजा ने अपने मंत्री को डांटा, रघुनाथ को समझा कर कहा–"इस यंत्र के प्रति मेरा विश्वास जम गया है।

इसकी कृपा से भविष्य में मेरे राज्य में बेक़सूरों को कोई डर न होगा।"

इसके उपरांत राजा ने रघुनाथ का सम्मान किया और उसे विदा किया। फिर राजा ने अनेक प्रकार से यंत्र की परीक्षा ली, सब परीक्षाओं में यही साबित हुआ कि यंत्र का निर्णय सही है। राजा को जब भी शीघ्र निर्णय लेना पड़ता था, तब वह पूर्ण रूप से उस यंत्र पर निर्भर रहने लगा। मंत्री ने कई बार सुझाया कि पूर्ण रूप से उस यंत्र पर निर्भर रहना भी वैसे उचित नहीं है। पर राजा ने उसकी सलाहों की उपेक्षा की।

उन्हीं दिनों में एक दुर्घटना हुई। दीनू मेहता नामक एक किसान ने दिनदहाड़े एक गाँव के चौरास्ते पर एक व्यापारी की भयंकर हत्या की। उसी वक़्त कई लोगों ने मिल कर उसको पकड़ लिया और न्यायालय में हाज़िर किया। दीनू खींचातानी करते अदालत में आने से इनकार करने लगा। उसने यहाँ तक बताया कि उसने कोई अपराध ही नहीं किया है।

दीनू मेहता को राजा के सामने हाज़िर किया गया। राजा के आदेशानुसार दो सेवकों ने मेहता के दोनों हाथों को कसकर पकड़ लिया। तीसरे सेवक ने मेहता के कंठ पर यंत्र लगाया।

राजा ने गरजकर मेहता से पूछा-"सुनो, तुम सच सच बताओ कि तुमने अपराध

किया है या नहीं? झूठ बोलोगे तो यह यंत्र हमें बताएगा।"

"जी, नहीं!" मेहता ने जवाब दिया। सेवक ने यंत्र के कांटे को देख बताया कि कांटा एक नंबर अंक पर है।

"इसको छोड़ दो!" राजा ने कहा।

मेहता के हत्या करते देखनेवाले लोग हाहाकार कर उठे। यह बात जानकर राजा ने मेहता से बार-बार यही सवाल किया? पर कांटा एक नंबर अंक पर ही रह गया।

इसे देख मंत्री बृहन्मति ने पल भर सोचा और पूछा—"यह बताओ कि तुमने हत्या की है या नहीं?"

"जी हाँ! मैंने हत्या की है।" मेहता ने कहा।

राजा के आश्चर्य की सीमा न रही। मेहता ने हत्या की है; पर यंत्र बताता है कि उसने अपराध नहीं किया है। ये दोनों सत्य कैसे हो सकते हैं? इसलिए राजा ने मेहता से फिर पूछा—"यदि तुमने हत्या की है तो इसका मतलब है, तुमने अपराध भी किया है न?"

"जिस व्यक्ति की मैंने हत्या की है, उसने मेरी पत्नी तथा बच्चों की भी हत्या की है। पर यह बात मैं अकेला ही जानता हूँ। इसीलिए मैंने उसकी हत्या की है! इसलिए वह अपराध कैसे हो सकता है?" मेहता ने राजा से पूछा।

मंत्री बृहन्मति ने राजा की आंखों में देखा, मुस्कुरा कर कहा—"यंत्र झूठ नहीं बोला। मेहता का विश्वास है कि उसने जो हत्या की है, वह अपराध नहीं है। इसीलिए यंत्र ने बताया कि मेहता ने अपराध नहीं किया है। वह दण्ड पाने योग्य है अथवा नहीं, इसका निर्णय दण्ड स्मृति करेगी, यंत्र नहीं।"

राजा को अपनी भूल मालूम हो गई। यंत्र की सीमा को जान लिया, मेहता को समुचित दण्ड दिया, उस दिन से राजा ने पूर्ण रूप से यंत्र के आधार पर न्याय का निर्णय करना छोड़ दिया।

बोतल में भूत

अशोकपुर एक संपन्न गांव था। वह धान के खेतों, फलों के बगीचों, तालाबों तथा उद्यानों से शोभायमान था। ग्रामवासी भी मेहनती थे, भरपेट खाकर आराम से अपने दिन गुजारते थे।

यदुपति उस गांव का अधिकारी था। उसके यहां काफी संपत्ति भी थी। उसका पुत्र रूपलाल अक़्लमंद तथा होशियार भी था।

दीपावली पर्व के समय हर साल उस गांव में महीना भर हाट लगता था। आसपास के गांवों से व्यापारी, मनोरंजन करनेवाले और प्रेक्षक भी आया करते थे।

एक वर्ष बड़ी अच्छी फ़सल हुई, इसलिए उस साल हाट में भी रौनक आ गई। उस हाट को चलाने की जिम्मेदारी रूपलाल पर आ पड़ी। उसने बड़ी समर्थता के साथ अपनी जिम्मेदारी निभाई।

हाट के चलते कुछ जंगली लोगों ने आकर वहां पर अपना डेरा डालना चाहा, यह खबर मिलते ही रूपलाल वहां पर जा पहुँचा। उसने जंगलियों के नेता से पूछा—"तुम लोगों का यहां पर काम ही क्या है?"

"हम लोग जड़ी-बूटियां तथा दवाइयां बेचने के लिए यहां पर आये हैं।" नेता ने जवाब दिया।

रूपलाल जानता था कि वे लोग चोर हैं, दगाखोर हैं। मगर उसे इस बात का डर था कि साथ ही वे लोग मंत्र-तंत्र करना जानते हैं, उनके साथ ज़ोर-ज़बर्दस्ती करे तो वे किसी न किसी रूप में उसकी हानि कर बैठेंगे। इसलिए उन्हें झोंपड़ियां बनाने से नहीं रोका। सब लोगों की भांति रूपलाल ने भी इस बात पर विश्वास किया कि जंगली लोगों के अधीन भूत-प्रेत

ए. सी. सरकार, जादूगर

व पिशाच रहते हैं और यदि वे किसी पर नाराज हो जाते हैं तो उन पर उन्हें हाँक देते हैं!

जंगलियों ने जिस दिन गाँव में क़दम रखा, उसके दो दिन के अन्दर दो डाके पड़े। एक जौहरी के घर तथा दूसरे एक व्यापारी के घर घुस कर चोरों ने माल लूट लिया था। इस पर जंगली लोगों की झोंपड़ियों की तलाशी ली गई, तब चोरी गये गहनों में से एक गहना मिल गया। तब सब जंगलियों की गिनती करने से पता चला कि उनमें से दस-बारह आदमी नादारद हैं। जंगलियों के नेता के हाथ-पैर बांध कर पीटा गया, मगर उसने यह स्वीकार न किया कि उन लोगों ने चोरी की है। आखिर लाचार होकर रूपलाल ने सभी जंगली लोगों को वहाँ से भगा दिया और चोरी के बारे में थाने में रपट की।

गाँव से चलते वक़्त जंगलियों के नेता ने रूपलाल को धमकी देते हुए कहा था—"यह मत समझो कि हमने तुमको जान से छोड़ दिया है। हमारी ताक़त से तुम अच्छी तरह परिचित हो। तुमने हमको अपने गाँव से खदेड़ दिया। इसलिए तुम पर मैं भूत भेजूंगा। जिंदगी भर वह तुमको नोच-नोच कर खाता रहेगा।"

जंगलियों के जाने के पूर्व ही पुलिस ने आकर उन्हें गिरफ़्तार किया।

वैसे रूपलाल हिम्मतवर था, मगर उसके अंध विश्वास ने उसके मन को कीड़े की भांति कुरेदना शुरू किया। यह डर उसे सताने लगा कि कोई भूत उसमें प्रवेश कर गया है। जल्द ही उसका मन भारी हो गया। उस दिन से लेकर रात के वक़्त उसे ठीक से नींद नहीं आती थी। आँखें मूंदने पर दुःस्वप्न सताने लगते, इस तरह वह भयंकर चिंता का शिकार हो गया।

इतने में हाट भी समाप्त हो गया। वैसे दिन भर रूपलाल को काम भी न था।

इसलिए बराबर उसे जंगली नेता की बातें तथा भूत की याद सताने लगी। वह अपने कमरे से बाहर तक न निकलता था। क्रमशः वह मानसिक बीमारी का शिकार हो गया। उसमें पागल के लक्षण भी दिखाई देने लगे। कभी कभी चिल्ला उठता–"लो, देखो! वह भूत है, भूत आ गया है! आम की डाल पर बैठा हुआ है।"

गांव के सब लोगों के मन में यह विश्वास जम गया कि जंगली लोगों ने रूपलाल पर मंत्र-तंत्र करके किसी भूत को हांक दिया है। रूपलाल की हालत देख सब लोग घबरा भी गये। अंधेरा फैल जाने पर लोग घरों से बाहर निकलने से भी डरने लगे। गांव का जीवन भी अस्त-व्यस्त हो गया।

पुलिस जंगली लोगों को पकड़ तो ले गई, पर चोरी साबित न होने की वजह से उन्हें छोड़ दिया।

रूपलाल जब शहर में पढ़ता था उन दिनों में सोमनाथ नामक उसका एक अच्छा मित्र था। वह जादू-टोना जैसी विद्याओं में प्रवेश रखता था। धीरे धीरे रूपलाल का समाचार सोमनाथ के कानों में भी पड़ा।

रूपलाल की बीमारी दूर करने का निश्चय करके सोमनाथ ने मानसिक बीमारियों के विशेषज्ञ से सलाह ली।

रूपलाल सूखकर कांटा हो गया था। उसमें घबराहट और निराशा झलक रही थी।

सोमनाथ को देखते ही फीकी हंसी हंस कर रूपलाल बोला–"दोस्त! यह कमबख्त भूत मुझको बराबर सता रहा है! मेरा रक्त चूस रहा है। मैं और अधिक दिन तक शायद जी नहीं सकता।" यों कहकर वह गहरी चिंता में डूब गया। फिर चिल्ला उठा–"लो, देखो, आम की डाल पर. "

सोमनाथ ने भी आम की डाल की ओर देखा, विस्फारित नेत्रों से आश्चर्य चकित हो जाने का अभिनय करते बोला–"हाँ, हाँ, तुम सच कहते हो, वह कमबख्त भूत दिखाई दे रहा है।"

वहाँ पर बैठे लोगों को आश्चर्य हुआ, क्योंकि डाल पर उन्हें पत्तों के सिवाय कुछ दिखाई नहीं दे रहा था।

"सोमनाथ! देखा है न! वह कैसा भयंकर है?" रूपलाल ने कहा।

"मैं समझता हूँ कि इससे ज्यादा भयंकर भूत और कहीं न होगा! भूतों को भगाते वक्त मैं तरह-तहर के अनेक भूतों को देखता हूँ न! मगर ऐसे भयंकर भूत को मैंने कभी नहीं देखा।" सोमनाथ ने उसकी हाँ में हाँ मिलाते उत्तर दिया।

उसने समझाया–"तुम्हारे मित्र का विश्वास है कि जंगली लोगों के नेता ने मंत्र-तंत्र के द्वारा उस पर किसी भूत-प्रेत का प्रयोग किया है, तुम उसके मन में यह विश्वास भर दो कि तुम उससे भी अधिक शक्तियाँ रखते हो, तब अपने इंद्रजाल के द्वारा भूत को भगाने का प्रमाण उसके सामने प्रस्तुत कर दो, फिर क्या उसकी बीमारी जाती रहेगी।"

सोमनाथ ने दो दिन पर्यंत अपनी योजना पर विचार किया। अनेक पुस्तकें पढ़ीं, आखिर एक योजना बनाई। फिर एक दिन दुपहर को अशोकपुर पहुँच कर अपने मित्र से मिला।

"जानते हो किसने इसे मुझ पर भेज दिया है? जंगली लोगों के नेता ने भेजा है!" रूपलाल ने कहा।

"हाँ, हाँ! मैंने यह बात सुनी है। मगर तुम यह मत समझो कि मैं उस जंगली नेता से किसी बात में कम हूँ? वह पढ़ा-लिखा तक नहीं है, मेरी भांति अथर्ववेद, तंत्रशास्त्र, उपनिषद् आदि वह थोड़े ही जानता है? अथर्ववेद में भूतों के वशीकरण का अद्‌भुत मंत्र है। मैंने उस मंत्र की अथर्ववेद तथा बृहदारण्यकोपनिषद् से कापी कर ली है; देखो तो सही! यह वही मंत्र है! तुम डरो मत।" इन शब्दों के साथ सोमनाथ ने अपनी थैली में से कागज़ों का एक बण्डल बाहर निकाला। उन कागज़ों में देवनागरी लिपि में कुछ लिखा हुआ था।

उसे देखते ही रूपलाल का चेहरा पल भर के लिए खिल उठा, फिर चिंता से भर गया।

थोड़ी देर बाद सोमनाथ ने रूपलाल से कहा–"आज शनिवार है। भूतों के उच्चाटन के लिए यह बढ़िया दिन है। मेरे यहाँ सारी चीज़ें तैयार हैं! आज संध्या को मैं उस भूत की खबर लेनेवाला हूँ। अब समझ लो, उसका खेल समाप्त हो गया है!"

संध्या होने को थी। सोमनाथ ने सारा इंतज़ाम करवा डाला था। यदुपति के घर के आँगन में पानी छिड़काकर साफ़ किया गया। फिर सफ़ेद चूर्ण से एक वृत्त बनाया गया। उस वृत्त के मध्य भाग में पीतल का एक कलश पानी भरकर रखा गया। कलश में आम की टहनियाँ रखी गईं। कलश के आगे फूलों के ढेर लगाये गये। तब रूपलाल को नहलाकर नयी धोती पहनायी गयी, फिर एक कंबल पर कलश के समीप बिठाया गया। उसके निकट एक ऊँचा पीढ़ा रखा गया: उस आवरण के चतुर्दिक रोशनी के वास्ते चार बड़े-बड़े तेल के दीपक रखे गये। गुग्गिल

का धूप लगाकर उस धुएँ को चारों ओर फैलाया गया ।

अंधेरे के फैलते ही सोमनाथ रूपलाल के समीप जा बैठा । संस्कृत के मंत्र पढ़ने लगा । अकस्मात् आम की डाल की ओर उंगली दिखाते बोला–"लो, देखो? देखो?" रूपलाल ने विस्फारित नयनों से उस डाल की ओर देखा ।

सोमनाथ शहर से अपनी सहायता के लिए एक व्यक्ति को अपने साथ लाया था । उसकी इच्छा पर उसके वास्ते एक अलग कमरे का प्रबंध किया गया था । उस कमरे में उस व्यक्ति ने चूल्हा जलाकर सोमनाथ के लिए चाय तैयार की । सोमनाथ ने कमरे में जाकर चाय पी ली, तब लौटकर अपना कार्य शुरू किया ।

सोमनाथ के पांच मिनट तक और मंत्र पढ़ने के पश्चात आम की डालें हिल उठीं । अचानक एक डाल टूटकर नीचे गिर पड़ी ।

"लो, देखो! भूत उतर आया है ।" सोमनाथ चिल्ला उठा । इसके बाद अपने सहायक को एक बोतल तथा सासर लाने का आदेश दिया । वह सासर चाय के प्याले के नीचे रखनेवाला ही साधारण सासर था । सोमनाथ ने एक तौलिये से उसे साफ़ किया, तब चिल्लाया–"अब बोतल ले आओ । उसे तौलिये से पकड़ो । बोतल को अपनी उंगलियों से मत छुओ ।"

सोमनाथ का सहायक कपड़े से बोतल पकड़कर ले आया । कपड़े से ही उसे अपने हाथ लेकर सोमनाथ ने उसके मुंह को तौलिये से साफ़ किया, तब उसे मेज पर रख दिया ।

इसके बाद सोमनाथ बोला–"रूपलाल! देखो! मैं उस कमबख्त भूत को कैसे पकड़ लेता हूँ!" इन शब्दों के साथ टूटी डाल की ओर देखते फिर बोला–"भूत महाशय! नीचे उतर आ जाओ! इस बोतल में घुस जाओ । अगर तुम तुरंत न आये तो मंत्रोच्छारण से मारण होम कर बैठूंगा ।

इसलिए चुपचाप चले आओ।" यों दायें हाथ से पुकारते हुए सोमनाथ ने झट से बोतल के मुंह पर सासर रख दिया और कहा–"दोस्त रूपलाल, मैंने भूत को इस बोतल में बंद किया है।"

इसके उपरांत सोमनाथ थोड़ी देर तक और मंत्र-पठन करता रहा, तब पूछा–"शायद तुम्हें अब तक विश्वास न हुआ होगा कि भूत बोतल के भीतर कैसे चला गया है। देखो, भूत बोतल में चला गया है, इसलिए सासर बोतल से चिपक गया है। सासर पकड़कर ऊपर उठा दूं तो बोतल भी ऊपर आ जाती है। अपनी आँखों से ठीक से देखो तो सही।"

रूपलाल ने सासर पकड़कर उठाया तो उसके साथ बोतल भी ऊपर उठी।

"भूत पकड़ा गया है! भूत पकड़ा गया है।" यों चिल्लाकर रूपलाल उसी वक़्त बेहोश हो गया।

सोमनाथ ने तत्काल उसके मुंह पर पानी छिड़क दिया। पंखा झलने पर थोड़ी ही देर में रूपलाल होश में आया। फिर क्या था, वह पहले जैसे साधारण मनुष्य बन गया।

सोमनाथ बोतल को अपने कमरे में ले गया। उसमें कार्क लगाया, दूसरे दिन सब के देखते उसे ले जाकर नदी में फेंक दिया।

सोमसाथ ने वास्तव में क्या किया था? उसका सहायक बोतल को चूल्हे पर खूब गरम करके लाया था। इसीलिए वह उसे एक तौलिये से पकड़ लाया था। गरम बोतल में वायु भी गरम होकर फैल जाती है। बोतल को बाहर लाकर उस पर सासर ढंकने पर बोतल के भीतर की वायु संकुचित हो जाती है जिस से बोतल के भीतर की वायु की अपेक्षा बाहर की वायु का दबाव अधिक हो ज़ाता है। इस कारण सासर बोतल के मुंह से कसकर चिपक जाता है।

आम की डाल को तोड़ने में लोहे की छड़ी काम में लाई गई।

१६३. अद्भुत माया शिल्प

रोमन साम्राज्य के पतन के पश्चात यूरोप जब अंधकार में था, तब अज्ञात बने अमेरिका खण्ड में माया जाति का शिल्प पराकाष्ठा को प्राप्त हो चुका था। इस चित्र में अंकित शिल्प ग्वाटिमाला के पियेग्रानिग्रास मंदिर के गोपुर के द्वार पर शिला में खुदा हुआ है।

इस दृश्य में अर्चक अथवा उस जाति का सरदार अपने अनुचरों के साथ वार्तालाप करते चित्रित है। व्यक्तियों के अवयवों की नाप-तौल इस प्रकार प्रस्तुत है कि वे चित्र यथार्थ व्यक्तियों के सदृश्य दीख रहे हैं।

इस शिल्प का थोड़ा भाग अर्द्ध मूर्ति तथा कतिपय भाग पूर्ण मूर्तिया हैं। यह माया शिल्प की विशिष्ठतां का एक उत्तम उदाहरण है। सरदार के हाथ तथा अन्य व्यक्तियों के शिर संपूर्ण शिल्प हैं, शेष सब पाक्षिक हैं।

इस दृश्य के चतुर्दिक १५८ संकेताक्षर हैं। विशेषज्ञों ने उनमें छे काल-संकेतों का पता लगाकर यह निर्णय किया है कि यह शिल्प ई. सन् ७६१ में निर्मित है।

इस प्रदेश का पता सर्व प्रथम १८९५ में लगाया गया है। १९३० में यहाँ पर अधिक खुदाई हो गई है।
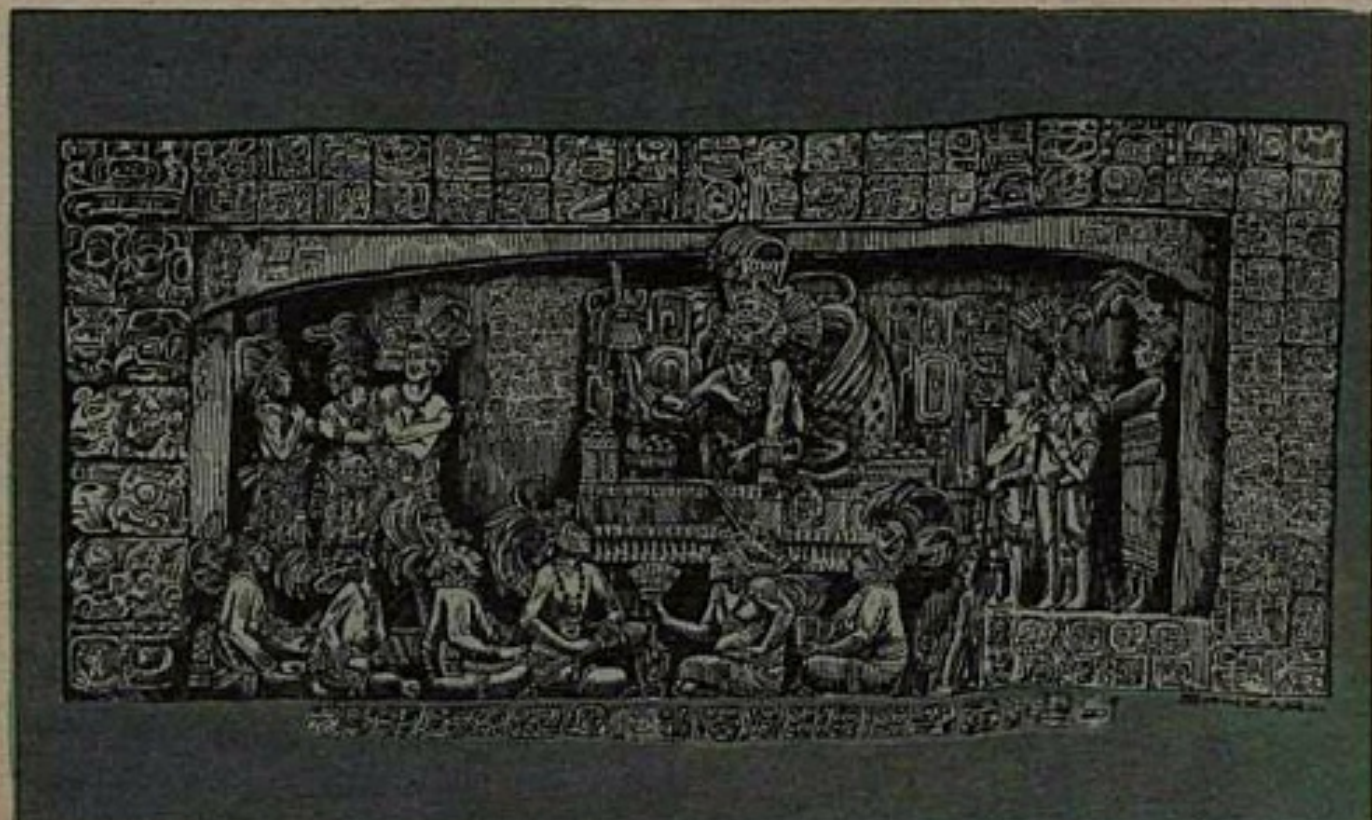
संगीत का प्रेमी

पुराने जमाने की बात है। एक गाँव में संगीत का एक बड़ा विद्वान था। वह प्रति दिन अपने घर के आँगन में चबूतरे पर बैठकर वीणा पर संगीत की साधना किया करता था। इसे देख रास्ता चलनेवाले वहाँ पर रुक जाते और उसकी प्रशंसा में दो-चार शब्द कह देते, तब वहाँ से चल देते–"ओह! कैसा अद्भुत संगीत है! कैसे महान विद्वान है!"

उस विद्वान को सिवाय प्रशंसा के कुछ प्राप्त न हुआ। उसे भर पेट भोजन तक मिलता न था। वह सोचा करता कि उसका संगीत सुनकर आनंदित होनेवाले लोग थोड़ा-बहुत भेंट क्यों न देते! मगर कोई उन्हें एक कौड़ी भी देता न था। यही उस विद्वान के लिए चिंता की बात थी।

उस विद्वान के घर के समीप में एक धनी रहा करता था। जब भी उसे फ़ुरसत मिलती, संगीत के विद्वान के निकट आ बैठता और अपनी पसंद के गीत गवाकर मन ही मन आनंदित हो उठता। वास्तव में वह संगीत का बड़ा प्रेमी था। धनी के मुँह से ये शब्द सुनकर गायक फूला न समाता, अत्यंत उत्साहपूर्वक वीणा बजाकर गीत सुनाया करता। विद्वान सोचता कि ऐसी अभिरुचि के साथ संगीत सुननेवाला धनी व्यक्ति दूध या तरकारी क्यों न उसके घर भेज देता! मगर वह माँगने में संकोच करता था।

एक दिन गायक की पत्नी ने कहा–"सब लोग आप की विद्या की प्रशंसा तो करते हैं, पर हमारी यह गरीबी दूर नहीं हो रही है। तिस पर भी वह धनी सज्जन आ जाते हैं तो घंटों आप का संगीत सुनते बैठ जाते हैं और हमें कोई काम तक करने नहीं देते। मेरी बात सुनकर आप

रामरतन लाल

उनसे कोई चीज़ माँग लीजिए; या तो वह हमारी थोड़ी-बहुत सहायता करेगा, या फिर उसका यहाँ पर आना बंद हो जाएगा। आप भी फ़ुरसत के वक़्त कोई काम-धंधा कर सकते हैं।"

"तुम ठीक कहती हो। विद्या को बेचना मैं भी पसंद नहीं करता, लेकिन अब कोई दूसरा चारा नहीं है। वरना हमारा गुजारा न होगा और हम लोग भूख से तड़प कर मर जायेंगे। मगर बात यह है, यदि मैं संगीत की साधना में डूब जाता हूँ तो यह बात भूल जाता हूँ। इसलिए तुम वक़्त पर मुझे याद दिलाओ।" पति ने कहा।

दूसरे दिन से जो भी व्यक्ति विद्वान का संगीत सुनाने की अभ्यर्थना करते उसके घर आता, उन सब से वह थोड़ा-बहुत धन वसूल करने लगा। इससे संगीत सुनने के लिए आनेवालों की संख्या धीरे-धीरे काफी घट गई।

पर धनी व्यक्ति को यह बात बहुत बुरी लगी। उसने गुस्से में आकर कहा-"मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि आप के मुँह से ऐसी बात निकलेगी। यह कैसी अप्रतिष्ठा की बात है! आप जैसे महान विद्वान का इस प्रकार विद्या को बाजार की चीज़ की भाँति बेचना शोभा नहीं देता! छीः छीः! आप का संगीत हम से भी आप ही को अधिक आनंद प्रदान करे! मैंने सोचा था कि आप जैसे विद्वानों में धन के प्रति लोभ न होगा और विद्या को ही अपना सर्वस्व मानते हैं। अपनी कला का विक्रय नहीं करते।"

इस पर विद्वान ने कहा-"महाशय! आप का कहना सही है कि मुझे अपने संगीत के द्वारा दूसरों का मनोरंजन करने से बढ़कर चाहिए ही क्या? फिर भी आप ज़रा सोचियो तो! मुझे रोज भोजन करना है! मेरी पत्नी को मुझे रसोई बनाकर खिलाना है। इसके लिए कुछ चीज़ों की ज़रूरत होती है! उन्हें ख़रीदने के लिए

मेरे पास धन नहीं है। खाना न खाया तो मैं मर जाऊँगा। मेरी मौत के साथ मेरी विद्या भी जाती रहेगी। ऐसी हालत में मैं आप लोगों का तथा अपना भी मनोरंजन कैसे कर सकूँगा?"

"आप की जैसी इच्छा! पर मैं आप को एक कौड़ी भी न दूंगा। आप का संगीत मैं न सुनूँ तो थोड़े ही मर जाऊँगा?" यों कहते धनी व्यक्ति झट उठकर वहाँ से चला गया।

विद्वान की पत्नी यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुई कि धनी व्यक्ति से पिंड छूट गया है।

मगर एक दिन प्रातःकाल ही वह धनी पुनः आ पहुंचा और बोला–"महाशय! मेरे पसंद का गीत एक बार सुनाइए। सपने में भी मुझे वही गीत सुनाई दे रहा है। मुझ से रहा न गया, इसलिए चला आया।"

अपने संगीत के प्रति यों पागल बने धनी को देख विद्वान फूला न समाया और उसने अपनी वीणा उठाई। उसी वक़्त उसकी पत्नी ने उसकी ओर चेतावनी भरी दृष्टि डाली, इस पर पंडित ने अपने उत्साह पर नियंत्रण रखते हुए शांत स्वर में कहा–"मैंनें पहले ही आप से निवेदन किया था। आप बताइए, मेरा संगीत सुनकर आप मुझे क्या देनेवाले हैं?"

धनी क्रोध में आया, बोला–"फिर आप वही बात दुहरा रहे हैं? विद्या को बेचना लज्जा की बात नहीं है?"

विद्वान ने अपनी बात का समर्थन करते हुए कहा—“ ”मैं दो घंटे तक वीणा बजा कर आप को सुनाऊँगा। आप दो सेर दूध दिलाइए।”

धनी ने सौदा करने का यत्न किया। पर विद्वान ने न माना, आखिर धनी को विद्वान की शर्त माननी पड़ी।

विद्वान ने दो घंटे तक वीणा बजाई, धनी उसका आनंद उठाकर चला गया, लेकिन उसने अपनी शर्त के अनुसार दूध नहीं भेजा।

इसके बाद चार दिन तक धनी व्यक्ति विद्वान के घर की ओर न पटका। मगर पांचवें दिन पुनः उपस्थित होकर कहा—“महाशय! कुशल हैं न! ज़रा संगीत तो सुनाइए!”

विद्वान ने क्रोधपूर्ण स्वर में कहा—“इसके पूर्व आपने दो घंटे तक मेरा संगीत सुना, लेकिन दो सेर दूध नहीं भेजा।”

“ओह! ऐसी बात! क्या आप ने सचमुच दूध की माँग की थी? मैंने सोचा था कि आप मज़ाक कर रहे हैं!” अमीर ने आश्चर्यपूर्ण स्वर में कहा।

“इस में मज़ाक कैसा? सचमुच मुझे दूध चाहिए।” विद्वान ने तीक्ष्ण दृष्टि प्रसारित कर कहा।

“अच्छी बात है! मैं एक साथ चार सेर दूध भिजवा दूंगा। आप अपना संगीत सुनाइए।” धनी ने कहा।

इस बार भी दो घंटे तक अपने मन-पसंद का संगीत सुनकर धनी अपने घर चला गया, परंतु दूध नहीं भेजा।

इसके बाद वह जब-तब आता, संगीत सुनता, दूध भिजवाने का वादा करता, पर न भेजता। विद्वान दूध की याद दिलाते तो धनी यही कहता कि भूल गया हूँ, ज़रूर भेज दूंगा। यों वह कोई न कोई बहाना करता।

आखिर विद्वान ने अपनी पत्नी की प्रेरणा से न्यायाधिकारी के पास जाकर धनी के प्रति फ़रियाद की।

न्यायाधिकारी ने सारा वृत्तांत सुनकर धनी को बुलवा भेजा और पूछा–"ऐसा मालूम होता है कि तुम से इस विद्वान को चालीस सेर दूध मिलने है। इसका तुम क्या उत्तर देते हो?"

धनी ने सोचा कि न्यायाधिकारी के मन में उसके प्रति बुरी धारणा घर न कर ले, इस ख्याल से उसने कहा–"यह बात सच है कि मुझ से विद्वान को चालीस सेर दूध मिलना है, लेकिन फिलहाल मेरे पास दूध के बर्तन नहीं हैं, उन्हें कोई चुरा ले गया है, इसलिए मैं इस वक़्त विद्वान के यहाँ दूध भेज नहीं सकता।"

न्यायाधिकारी ने धनी की चाल भाँप ली और कहा–"अच्छी बात है! तुम बताते हो कि तुम्हारे पास दूध के बर्तन नहीं हैं। इसलिए मेरा फ़ैसला यह है कि तुम्हारी गायों में से श्रेष्ठ गाय को यह विद्वान चुनकर अपने घर ले जाएगा और दो महीने रख लेगा।"

यह निर्णय सुनने पर धनी को लगा कि उसके सिर पर मानो गाज गिर गई हो।

"मेरी गायों में से सर्व श्रेष्ठ गाय को ले जाएगा? यह कैसा अन्याय है? यह तो प्रति दिन दस सेर दूध देगी। यदि उस गाय को वह दो महीने तक अपने घर रखेगा तो वही मेरा ऋणी होगा!" धनी ने कहा।

"हाँ, तुम ठीक कहते हो! वह तुम्हारा ऋणी होगा। तुम्हारा ऋण चुकाने के

लिए वह प्रति दिन तुम्हारे घर आकर दस घंटे वीणा बजाएगा।" न्यायाधिकारी ने समझाया।

धनी को अपनी गायों में से श्रेष्ठ गाय से हाथ धोना पड़ा, फिर भी उसे इस बात की प्रसन्नता थी कि वह रोज़ दस घंटे तक अपने पसंद का संगीत सुन सकता है।

दूसरे दिन विद्वान वीणा लेकर धनी के घर पहुँचा और उसके पसंद के गीत सुनाने लगा। दो घंटे तक धनी सिर हिलाते, हाथों से ताल देते संगीत का मजा लूटने लगा, तीसरे घंटे से गर्दन में दर्द शुरू हो गया। चौथे घंटे में हाथ काम देने से रह गये। जल्द ही उसे ज़ोर का सिर दर्द प्रारंभ हुआ। विद्वान को घंटों संगीत की साधना करने की आदत थी, इसलिए वह वीणा बजाते जाता था।

धनी ने कराहते कहा–"महाशय! आज के लिए अपना संगीत बंद कीजिए! बाक़ी कल सुनंगा। अब आप कृपया घर जाइए!"

"यदि ऐसा रहा तो मेरा ऋण कब चुकेगा? मैं अपने कर्तव्य के अनुसार दस घंटे वीणा बजाकर ही छोड़ूंगा।" विद्वान ने कहा।

इसके उपरांत धनी व्यक्ति संगीत के विद्वान को वीणा सहित न्यायाधिकारी के घर ले गया और रोते हुए बोला–"महानुभाव, मुझे बचाइए। इस विद्वान तथा इसके संगीत को मैं प्रणाम करता हूँ। यह परेशानी सहन नहीं कर सकता। मुझ पर दया कीजिए।"

"तब तो इस विद्वान का ऋण कैसे चुकेगा?" न्यायाधिकारी ने पूछा।

"उस कर्ज़ के चुकने की कोई ज़रूरत नहीं, मुझ को इस विपदा से बचा ले तो मैं इस विद्वान को पाँच गायें और दंगा।" यों कहते धनी रो पड़ा।

इस प्रकार धनी के ऋण के चुकने के साथ विद्वान को कुल छे गायें भी हाथ लगीं। फिर क्या था, वह निश्चित हो संगीत की साधना करते अपना शेष जीवन बिताने लगा।

राजनीति

सैंकडों साल पहले की बात है। कोसल देश पर राजा कुटिलसेन का शासन था। उस राज्य से लगकर मणिपुर नामक एक छोटा सा राज्य था जिस का राजा केशव सेन था। वह केवल नाम के वास्ते राजा था। जनता में उसका बिलकुल मान न था। सिर्फ़ पांच गाँव मिलकर वह एक राज्य बना था। पांचों गाँवों में पांच ज़मीन्दार थे। गाँव की जनता अपने ज़मीन्दार के प्रति आज्ञाकारी थी। राजा तो इन पांचों ज़मीन्दारों के हाथों का खिलौना था।

प्रत्येक ज़मीन्दार के मन में राजा बनने की इच्छा जागृत हुई। सब ने अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए राजा कुटिलसेन की सहायता मांगी। उनकी मदद से कोसलराजा कुटिलसेन ने सरलता पूर्वक उस राज्य पर आक्रमण कर दिया।

कुटिलसेन राजनीति का अच्छा ज्ञाता था। वह यह बात भली भांति जानता था कि ज़रूरत के वक़्त लोगों से मदद कैसे ले और कार्य के समाप्त होते ही उन से छुटकारा कैसे पावे? उसने यह बात अच्छी तरह से जान ली कि पाँचों ज़मीन्दारों ने किस उद्देश्य से उसकी सहायता की। ऐसे लोगों में से किसी एक को राजा बनावे तो बाक़ी लोग फिर से विद्रोह मचायेंगे!

अलावा इसके कोसल राजा ने जिस वक़्त मणिपुर राज्य को अपने अधिकार में लिया, उस समय उसकी हालत बड़ी खराब थी। वह राज्य पांच लोगों के हाथों मे था, इस कारण उसके विकास की कोई गुंजाइश न थी। कुटिलसेन ने निश्चय किया कि उन्हीं के द्वारा उस राज्य का सुधार करना है।

रणधीर चोपड़ा

राजा ने उन्हें बुलवाकर कहा : "आप पांचों ने मेरी सहायता की है। इसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए मैं आप में से किसी एक को मणिपुर का राज्य सौंप देना चाहता हूं। मगर मैं आप में से किसी एक को राजा नियुक्त करूं तो बाक़ी लोगों के प्रति अन्याय होगा। इसलिए मैं यह निर्णय आप के देश की जनता के हाथों में छोड़ देना चाहता हूं। मैं इस बात का शीघ्र प्रबंध करूंगा कि आप के गाँवों की सभाएँ राजा का चुनाव करे।"

यह बात सुनते ही पांचों ज़मीन्दार सोच में पड़ गये। प्रत्येक गाँव की ग्राम सभा उस गाँव के ज़मीन्दार के अधीन में है। पर बाक़ी ग्रामसभाओं का विश्वास कैसे प्राप्त करे? इस आशय की पूर्ति के लिए प्रत्येक ज़मीन्दार अपने अधीन के गाँव को छोड़ शेष चारों गाँवों की उन्नति में लगन के साथ योगदान देने लग गये। पांचों का विचार एक ही था! चुनाव में विजयी होकर राजा बने।

धन पानी की तरह खर्च किया गया। मंदिरों को अलंकृत किया गया। नये कुएँ व तालाब खुदवाये गये। सड़कें बनाई गईं। सारे देश में रौनक आ गई। प्रत्येक गाँव में अपने ज़मीन्दार के प्रति द्वेष भाव तथा अन्य ज़मीन्दारों के प्रति श्रद्धा का भाव पैदा हुआ।

एक वर्ष बाद कुटिलसेन ने पांचों ज़मीन्दारों को बुलवा कर यों समझाया :

"मेरे गुप्तचरों के द्वारा मुझे मालूम हुआ कि आप में से कोई भी व्यक्ति अपने गाँव की जनता में लोकप्रिय नहीं हैं। आप में से कोई भी व्यक्ति मणिपुर के राजा बनने योग्य नहीं हैं। इसलिए मैं चुनाव रद्द करके अपने प्रतिनिधि को ही मणिपुर का शासक नियुक्त करता हूं।"

पांचों ज़मीन्दार अपनी सारी संपत्ति खर्च करके भी राजा बन नहीं पाये। उन लोगों ने जो षड़पंत्र किया और उनमें जो लोभ था, उसने उन्हें राजा बनने से दूर, केवल साधारण नागरिक बनाकर छोड़ा।

अक़्ल किसकी?

एक गांव में दामोदर और लक्ष्मी नामक एक दंपति था। लक्ष्मी स्वभाव से बड़ी आलसी थी। वह हमेशा खोई खोई रहती। वह जो भी काम शुरू करती वह ठीक से पूरा न होता।

दामोदर प्रति दिन लक्ष्मी की करतूतों को देख खीझ उठता—"अरी तुम्हारी खोपड़ी में गोबर भरा है। तुम किसी काम की नहीं हो! निरी बेवकूफ़ हो!" वह रसोई बनाती, तो भुन जाती, तरकारी भी जलकर राख हो जाती, दूध उफान में वह जाते। चावल, गेहूँ सुखा देती तो भेड़-बकरियाँ खा जातीं। उसका हर काम कुछ इसी प्रकार का होता।

उन्हीं दिनों में दामोदर की दुधारू भैंस सूख गई। एक और दुधारू भैंस को खरीदने के लिए दामोदर पांच सौ रुपये तक जमा कर चुका था। उसके पड़ोस का गांव अच्छी-खासी भैंसों के लिए विशेष प्रसिद्ध था। दूसरे दिन वहां पर हाट लगनेवाला था, इसलिए उसके पहले ही दिन संध्या को दामोदर भैंस खरीद लाने घर से चल पड़ा।

उसने अपनी पत्नी से कहा—"अरी बावरी! क्या सारे रुपये लेते जाऊँ या दो सौ बचाकर तीन सौ रुपये लेते जाऊँ?"

लक्ष्मी ने जंभाइयां लेते हुए कहा—"तुम्हारी जैसी मर्ज़ी!"

"घर में रुपये छोड़ जाना ख़तरे से खाली नहीं है, तुम भैंस की तरह सो जाती हो! कोई घर में घुस कर हड़प ले जाएगा।" दामोदर ने कहा।

"तब तो सारे रुपये लेते जाओ।" लक्ष्मी ने कहा।

"तीन सौ रुपयों में बढ़िया भैंस मिल जाएगी। ज्यादा रुपये हाट में क्यों ले

शैलजा शर्मा

जाऊँ? वैसे आज कल के दिन भी अच्छे नहीं हैं। घर में दो सौ रुपये छोड़ जाता हूँ। तुम जरा सावधान रहो!" यों समझा कर दामोदर तीन सौ रुपये लेकर घर से चल पड़ा। लक्ष्मी अपने पति के जाते ही किवाड़ बंद कर के पल भर में खुर्राटे लेकर सोने लगी।

मगर उस दंपति की बातचीत एक चोर ने छिप कर सुन ली। उसे लक्ष्मी का हाल मालूम हो गया। अलावा इसके लक्ष्मी का घर एक कोने में और घरों से दूर बना था। इसलिए चोर ने हिम्मत करके किवाड़ खट-खटाये। बड़ी देर तक दर्वाजे पर दस्तक देने पर भी लक्ष्मी के जागने के लक्षण दिखाई न दिये।

चोर ने मन में निश्चय कर लिया कि लक्ष्मी अभी तक नींद से जागी नहीं। उसने पिछवाड़े की ओर सेंध लगाना शुरू किया। उस ने बड़ी मेहनत करके दीवार में एक व्यक्ति के घुसने लायक़ सेंध लगाया, चारों ओर एक बार नज़र दौड़ाई तब इतमीनान से सेंध में से सिर भीतर पहुँचाया। दूसरे ही क्षण उसके सिर पर मूसल की मार पड़ी। चोर चीख उठा और सेंध में ही बोहोश हो गया।

लक्ष्मी ने ही चोर पर मूसल चलाई थी। चोर ने जिस वक़्त घर के दर्वाजे पर दस्तक दिया था, तभी वह जाग उठी थी। मगर वह आलसी थी, इसलिए उसने उठ कर किवाड़ नहीं खोले। जब उसने

भांप लिया कि चोर सेंध लगा रहा है तब उसके दिमाग में एक उपाय सूझ पड़ा। उसने मूसल लाकर चोर के सिर पर दे मारा। इसके बाद वह चोर को खींच ले गई। एक कमरे में डाल कर ताला लगाया। तब वह निश्चिंत सो गई। सवेरा होते ही उसने सबको बुलाकर चोर को उनके हाथ पकड़ा दिया, सबने उसकी अक़्ल की तारीफ़ की।

दूसरे दिन दामोदर ने उधर हाट में एक बढ़िया भेंस देखी। उस भेंस के मालिक ने पहले उसका दाम चार सौ बताया, आखिर मोल भाव करने पर साढ़े तीन सौ पर सौदा पटा। दामोदर घर से सारे रुपये लाये होते तो वह भेंस को उसी वक़्त घर ले जाता।

अपनी भूल पर दामोदर पछता रहा था, तभी झबरी मूंछोंवाले एक वृद्ध ने आकर पूछा—"तुम्हें यह भेंस पंसद आ गई है न?"

दामोदर ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया।

"तब तो खरीद क्यों नहीं लेते?" बूढ़े ने पूछा।

"भेंस का दाम ज्यादा है। मेरे पास तीन ही सौ रुपये हैं।" दामोदर ने जवाब दिया।

"वास्तव में वह भेंस मेरी है। मैं उस आसामी के लिए कर्जदार था, उसका ऋण चुका न पाया, इसलिए भेंस दे दी। तुम जरूर इसे खरीद लो। यह भेंस तुम जैसे भले आदमी के हाथ में पड़ जाय तो मुझे बड़ी खुशी होगी।" वृद्ध ने कहा।

"मेरे पास पूरी रक़म नहीं है न?" दामोदर ने संदेह प्रकट किया।

"तुम तीन सौ रुपये मुझे दे दो। मैं उसको समझा-बुझाकर, आखिर गिड़गिड़ा कर ही सही वह भैंस तुम्हें सौंप दूंगा।"

दामोदर के हाथ में जो तीन सौ रुपये थे, उन्हें उसने बूढ़े के हाथ रख दिये। इसके बाद बूढ़े का कहीं पता न चला। दामोदर बड़ी देर तक बूढ़े का इंतज़ार करता रहा। आखिर उसके लौटते न देख वह भैंस के मालिक के पास गया और बूढ़े के बारे में दरियाफ़्त किया।

भैंस के मालिक ने दामोदर की ओर एड़ी से लेकर चोटी तक देख कहा– "अजी, वह मूंछवाला बूढ़ा कौन है? मैं क्या जानूं? यह भैंस मेरे ही घर में पैदा होकर बढ़ी है। हमारे दिन अच्छे नहीं हैं, इसलिए में इस बेच रहा हूं, समझें!"

इसपर दामोदर पागल की तरह सारे हाट को छानता रहा, मगर कहीं बूढ़ा दिखाई न दिया।

जब लोगों को यह बात मालूम हुई, तब उन सबने दामोदर को बताया कि वह बूढ़ा एक नंबर का बदमाश और दगाबाज है। फिर भी इस आशा से दामोदर शाम तक बूढ़े को खोजता रहा कि कहीं वह दिखाई दे, आखिर निराश हो संध्या तक खाली हाथ घर लौट आया।

"भैंस कहां?" लक्ष्मी ने पूछा।

दामोदर ने लक्ष्मी को सारी कहानी सुनाई। सारी बातें सुनकर लक्ष्मी ने कहा–"जितना हमारे भाग्य में था, वही बचा। तुम चिंता न करो। फ़िक्र करने से थोड़े ही रुपये वापस मिल जाते हैं?"

इसके बाद दामोदर ने अपनी पत्नी की करनी सुनकर उसकी बड़ी तारीफ़ की और उस दिन से लक्ष्मी के प्रति अपने विचार को बदल लिया। उस दिन से लेकर दामोदर ने फिर कभी अपनी पत्नी को "मूर्ख और आलसी" नहीं बताया।

होशियार मूर्ख

एक गांव में शंकर नारायण नामक एक गृहस्थ था। वह बड़ी किफ़ायती था। इस प्रकार उसने अपनी पैतृक संपत्ति को दुगुना बढ़ाया। शंकरनारायण के राजगोपाल नामक एक पुत्र था। वह मंदबुद्धिवाला था। इसलिए शंकरनारायण सोचा करता था कि उसने पूर्व जन्म में कोई पाप किया है, इसीलिए उसके यहाँ मूर्ख पैदा हुआ है।

एक बार उस गांव में एक सन्यासी आया। शंकरनारायण ने उस सन्यासी के पास जाकर कहा-"महात्मा! मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैंने कोई पाप किया है। उस पाप से मुक्त होने के लिए कोई उपाय हो तो कृपया बताइये!"

"मैं तुम्हें एक बढ़िया उपाय बता देता हूं। तुम आज दिन भर किसी की बात मत सुनो, पर जो भी कुछ पूछे, दे दो।" सन्यासी ने समझाया।

शंकरनारायण बड़ा प्रसन्न हुआ। घर लौटकर किवाड़ बंद करके अंदर बैठ गया। इतने में किसी ने आकर दर्वाज़े पर दस्तक दिया। शंकरनारायण का दिल दहल उठा। उसने उठकर कांपते हाथों से किवाड़ खोल दिये। दर्वाज़े पर दस्तक देनेवाला उसी का पुत्र राजगोपाल था।

"बाबूजी, दर्वाज़े बंद करके क्यों बैठे हैं?" राजगोपाल ने अपने पिता से पूछा।

शंकरनारायण ने सारी बात समझायी। राजगोपाल ने कहा-"बाबूजी! बात तो सिर्फ़ एक दिन की ही है न? आज एक दिन जंगल में बिताकर क्यों न आते? वहाँ पर कोई आप से दान नहीं मांगेगा! हमारा कोई नुक़सान भी न होगा।"

अपने पुत्र की इस अक्लमंदी पर खुश होकर शंकरनारायण कड़ी दुपहरी में जूते पहने, सिर पर पगड़ी बांधे, हाथ में

रमापति शुक्ल

छाता लिये, जंगल की ओर चल पड़ा। रास्ते में कोई शंकरनारायण के सामने से आ गुज़रा। उसने यह कहते शंकरनारायण से जूते माँगे कि धूप में उसके पैर जल रहे हैं। उस दिन शंकर नारायण से कोई भी व्यक्ति कुछ भी माँगे देना था, इसलिए शंकरनारायण ने अपने जूते उसे दे दिये।

थोड़ा और आगे जाने पर एक छोटी सी बच्ची को गोद में लिये एक औरत सामने आई। उसने शंकरनारायण से छाता माँगा। शंकरनारायण ने मन ही मन उस औरत को गाली देते छाता उसे दे दिया। थोड़ी दूर और आगे बढ़ने पर एक वृद्ध दिखाई पड़ा। उसने शंकरनारायण का कुर्ता माँगा, उसने वृद्ध को कुर्ता दे दिया।

अब शंकरनारायण जंगल में प्रवेश करने ही जा रहा था, एक चोर ने उसका रास्ता रोककर धमकी दी–"चुपचाप तुम अपनी धोती निकालकर वहाँ पर रख दो।" शंकरनारायण ने डरते हुए पगड़ी पहन ली और धोती निकालकर चोर के हाथ दे दी।

और आगे बढने पर एक सज्जन पुरुष ने शंकरनारायण को देख समझाया–"महाशय! आप के रास्ते में एक जगह दलदल है। सावधानी से आगे बढ़िए!"

सन्यासी के कहे अनुसार शंकरनारायण को किसी की बात माननी न थी, इसलिए आगे बढ़कर वह दलदल में फँस गया। समीप में ही जानेवाले उस सज्जन ने आकर शंकरनारायण को दलदल से उबारा।

एड़ी से लेकर चोटी तक कीचड़ में सना शंकरनारागण आगे बढ़ने का विचार त्याग कर सन्यासी के पास लौट आया और उसको सारा समाचार कह सुनाया।

इस पर सन्यासी ने कहा–"मैंने जो बातें बताईं, उन्हें तुम ने ठीक से नहीं समझा। मैंने कहा था कि याचकों को अपनी इच्छा के अनुसार दान देते समय तुम दूसरों की बातें मत सुनो। अब भी सही, तुम अपनी कंजूसी त्याग दो। तुम्हारे पास जो कुछ है, उसमें थोड़ा बहुत दूसरों में बाँटो, इससे बढ़कर दूसरा कोई पुण्य न होगा।"

संपाती के मुँह से सीताजी का समाचार जानकर सभी वानर खुशी से नाच उठे और सिंहनाद करने लगे। इसके बाद लंका में जाने के ख्याल से वे सब समुद्र के तट पर पहुँचे। उस महा सागर को देखते ही वानरों का उत्साह ठण्डा पड़ गया। देखने में वह डरावना था और उसमें भयंकर प्राणी थे। कहीं किसी स्थान पर समुद्र शांति पूर्वक सोता हुआ भले ही दिखाई दे, पर जहाँ-तहाँ उत्ताल तरंगें उठकर गिर जातीं और डरा देती थीं। उसका दूसरा किनारा दीखता न था।

"अब हमें क्या करना है?" वानरों ने परस्पर प्रश्न किया।

अंगद ने भांप लिया कि उसके दल के लोग समुद्र को देख भयभीत हो उठे हैं, उसने समझाया–"तुम लोग डरो मत। डर के द्वारा हमारा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता, उल्टे वह हम्हीं को खा जाएगा। अब हमें अपना पराक्रम प्रदर्शित करने का मौक़ा मिला है। पराक्रम के द्वारा ही हमारा काम सफल होगा।"

उस दिन रात को सबने समुद्र तट पर ही पड़ाव डाला। दूसरे दिन प्रातः काल के होते ही अंगद ने वानर सेना को इकट्ठा किया, वानरों को एक स्थान पर इकट्ठा करने की शक्ति सिवाय अंगद तथा हनुमान के कोई नहीं रखता था।

१०. हनुमान की लंका-यात्रा
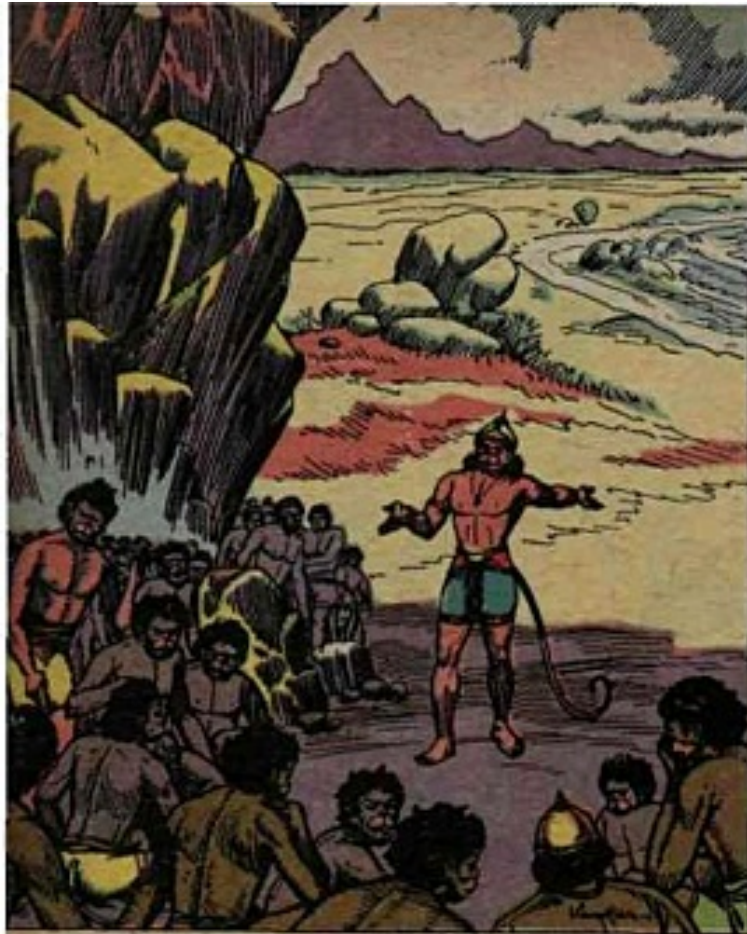
"मैं जानना चाहता हूँ कि हममें से कौन महावीर इस समुद्र को लांघ कर सीताजी को देख आवेगा और इस प्रकार सुग्रीव की आज्ञा का पालन करने का यश-संपादन करेगा? लंका यहाँ से एक सौ योजन की दूरी पर है। जो व्यक्ति इस दूरी को लांघ सकेगा, वही हमारे घर लौटने तथा हमें अपनी पत्नी व पुत्रों के साथ सुख पूर्वक जीवन-यापन करने का मौक़ा प्रदान कर सकेगा। सुग्रीव, रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मण को पुनः देख सकने का पुण्य-संपादन भी वही कर सकेगा। बताओ, तुममें से कौन सौ योजन की दूरी को लांघ सकता है? मेरी व्याकुलता को दूर करो।" अंगद ने वानर परिवार से पूछा।

परंतु किसी ने कोई उत्तर न दिया, सब लोग शिला प्रतिमाओं की भांति निश्चल रह गये।

सबको मौन देख अंगद ने पुनः कहा— "तुम सब लोग असाधारण बल एवं पराक्रम रखते हो। अत्यंत यशस्वी भी हों! गमन-शक्ति रखनेवाले हों! यह तो बताओ कि कम से कम तुम लोग कितनी दूर लांघ सकते हो?"

इस सवाल के जवाब में कुछ वानर वीरों ने अपनी-अपनी शक्ति एवं सामर्थ्यों का परिचय यों दिया :

गज ने बताया कि वह दस योजन लांघ सकता है! गवाक्ष ने बीस योजन लांघने की अपनी क्षमता बताई। गवय ने तीस योजन लांघने की बात कही। शरभ ने चालीस योजन, गंधमादन ने पचास योजन, रैंद ने साठ योजन, द्विवत ने सत्तर योजन, सुषेण ने अस्सी योजन लांघने की बात क्रमशः बता दी।

अंत में जांबवान ने कहा—"वैसे दूर लांघने में मैं इसके पूर्व बड़ी दक्षता रखता था। पर अब मैं बूढ़ा हो चुका हूँ। फिर भी यह तो श्रीरामचन्द्र का कार्य है, इसलिए मैं बचना नहीं चाहता।

यदि तुम सब लोग मुझ से अनुरोध करे तो मैं कोशिश करके निस्संदेह नब्बे योजन लांघ सकता हूँ ।"

सब की बातें सुनने पर अंगद ने बताया–"सौ योजन की यह दूरी में बड़ी आसानी से लांघ सकता हूँ, परंतु मेरा संदेह है कि मैं लौटकर आ सकता हूँ, या नहीं!"

जांबवान ने कहा–"ओह! क्या तुम्हारी शक्ति एवं सामर्थ्यों से हम परिचित नहीं हैं? तुम तो सौ योजन क्या, एक हजार योजन की दूरी को भी सरलता पूर्वक लांघ सकते हो। इसी प्रकार वापस भी आ सकोगे। इसमें कोई संदेह नहीं है। मगर बात यह है कि तुम राजा हो, इसलिए हम तुमको किसी भी हालत में भेजना न चाहेंगे! तुम हम में से किसी को भी भेज सकते हो, लेकिन तुम स्वयं नहीं जा सकते! तुम्हारे कुशल-क्षेम का ख्याल रखना हमारा दायित्व है। तुम लंका में जाओगे तो हमारी देखभाल कौन करेगा? हम लोग कर ही क्या सकते हैं! इसलिए तुम हमारे साथ ही रहो!"

इस पर अंगद ने कहा–"समुद्र को मेरे लांघने के बाद तुम में से कोई लांघ न सके तो हम सब मिलकर अनशन करेंगे।

यह कार्य संपन्न किये बिना किष्किंधा को लौटने पर यह निश्चय जानो कि हम प्राणों के साथ जीवित नहीं रह सकते। सुग्रीव अवश्य हमारा वध कराएगा। इसलिए जांबवान महाशय, तुम तो हम सब में बड़े हो, सोच-समझकर कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे हमारा काम बन जाय।"

इसके उत्तर में जांबवान ने अंगद से कहा–"हमारा यह काम जरूर ही संपन्न होगा। इस कार्य को सफल बना सकनेवाले व्यक्ति को अभी मैं तुम्हें दिखाता हूँ।" इन शब्दों के साथ एक कोने में तटस्थ भाव से बैठे हनुमान के निकट जाकर यों कहा:

"हे हनुमान! तुम वानरों में श्रेष्ठ हो! समस्त शास्त्रों के ज्ञाता होकर भी इस प्रकार तुम मौन क्यों बैठे हो? गरुड़ के पंखों में जो ताक़त है, वह तुम्हारी बाहुओं में है। पराक्रम में तुम सुग्रीव तथा लक्ष्मण से कम न हो! अन्य लोगों व प्राणियों की तुम्हारे साथ तुलना ही नहीं हो सकती। क्या यह बात तुम नहीं जानते? बेटा! जन्म धारण करते ही तुम सूर्य को देख एक फल समझ कर भ्रम में पड़ गये और उसको निगलने के लिए ही आकाश में उड़ चले थे। ऐसी हालत में उछल-कूद में तुम्हारी बराबरी कौन कर सकता है? अब तुम अपनी शक्ति हम सबको दिखाओ, इस समुद्र को पार करो।"

ये बातें सुनने पर हनुमान का उत्साह उमड़ पड़ा, उसने अपने शरीर का विस्तार किया। हनुमान का समुद्र को पार करने के लिए तैयार होने तथा उसके शरीर के बढ़ते देख अन्य वानर उसकी प्रशंसा करते सिंहनाद कर उठे। हनुमान वामन की भांति बढ़ता ही गया। उसके बल एवं पराक्रम भी बढ़ गये। उसका मुख मण्डल लाल हो गया जैसे वह धूम्र विहीन आग का गोला हो!

हनुमान ने उठकर वृद्ध वानरों को प्रणाम किया, तब कहा—"मैं समुद्र को इस तरह पार कर जाऊंगा जैसे वायु बड़ी सरलता से समुद्र को पार करती है। मैं समुद्र मध्य में कहीं नहीं रुकूंगा। मैं उदयगिरि से सूर्य के साथ ही निकल कर उससे भी पूर्व अस्ताचल पहुंच जाऊँगा और उसके सामने आ जाऊँगा। मैं आकाश में जिस वेग के साथ उड़ूंगा, उसे देख समुद्र मेरे पीछे आ जाएगा! मैं जिस वक़्त समुद्र पार करूंगा, तब आकाश के मेघ तितर-बितर हो जायेंगे। पर्वत सब कांप उठेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि मैं अवश्य ही सीताजी के दर्शन कर लौट आऊँगा। मुझे अच्छे शकुन

दिखाई दे रहे हैं। जरूरत पड़ने पर मैं सारी लंका को उखाड़ कर अपने साथ लेते आऊँगा।"

हनुमान के मुंह से ये शब्द सुनते ही वानर आनंद के साथ आश्चर्य में भी आ गये।

हनुमान का आत्मविश्वास देख प्रसन्न हो जांबवान ने कहा—"बेटा! तुमने हम सब का दुख दूर किया। तुम्हारा कार्य सफल हो, इस वास्ते हम सब प्रार्थना करेंगे। हमारे आशीर्वादों के बल पर तुम समुद्र पार करो। हमारे प्राण तुम्हारे हाथों में हैं! तुम पर ही हम सब आशा लगाये बैठे हैं।"

"मैं जिस वक्त ऊपर उडूंगा, उस समय मेरे चरणों के आघात से यह पृथ्वी टिक न सकेगी। इसलिए मैं इस महेन्द्र पर्वत पर से ऊपर उडूंगा।" इन शब्दों के साथ हनुमान उस पर्वत पर जा चढ़ा।

पर्वत पर पहुँचकर उड़ने के पूर्व हनुमान ने अपने हाथों तथा पैरों से भी पर्वत को हिलाकर देखा। अचल रहनेवाला वह पर्वत बड़ी देर तक कांपता रहा। पहाड़ पर के वृक्षों के फूल झर उठे। पत्थर लुढ़क पड़े। पर्वत की गुफाओं में रहनेवाले जानवर विकृत

रूप से चिल्ला उठे। पर्वत पर रहनेवाले ऋषि व विद्याधर भी यह सोचकर डर गये कि पर्वत फूटता जा रहा है। विद्याधर अपनी पत्नियों के साथ आकाश में उड़ चले। उन्हें महाकाय हनुमान दिखाई दिया।

तदनंतर हनुमान ने हवा में उड़ते हुए अपनी पूंछ को झाड़ दिया, मुट्ठियाँ कस लीं, पैर मोड़ लिये, सांस को स्तंभित किया, अपने गगन मार्ग को एक बार देख लिया, तब वानरों से कहा—"मैं लंका में जा रहा हूँ। वहाँ पर यदि सीताजी दिखाई न दीं तो स्वर्ग लोक में जाऊँगा। वहाँ पर भी यदि सीताजी

दिखाई न दें तो पुनः लंका को लौटकर रावण को बंदी बनाकर ले आऊँगा, अथवा रावण के साथ लंका को भी उठा ले आऊँगा।"

यों समझा कर हनुमान आकाश में उड़ा। उसके साथ अनेक पेड़ भी उड़ चले। उसके शरीर पर तथा समुद्र में भी फूल झर उठे। हनुमान ने अपने हाथ फैलाये तो ऐसे दीखते थे, मानो पांच सिरवाले सर्प हो। उसकी आँखें ऐसी प्रतीत होती थीं, मानो सूर्य और चन्द्रमा का एक साथ उदय हुआ हो। उसकी पूंछ एक दम सीध में खड़ी थी। वह एक अद्‍भुत दृश्य था।

हनुमान अत्यंत वेगपूर्वक जा रहा था। उसके हाथों के नीचे वायु की जो ध्वनि हो रही थी, वह मेघ-गर्जन जैसी प्रतीत हो रही थी। हनुमान लंका के विनाश के पुच्छल तारा जैसे लग रहे थे, उसकी छाया समुद्र पर उसी के साथ हिलती जा रही थी।

उस रूप में जानेवाले हनुमान को देख समुद्र ने यों सोचा: "मुझे तो इस हनुमान की सहायता करनी है। यह तो इश्वाकुवंशी रामचन्द्रजी के कार्य पर ही तो जा रहा है। मेरा उद्धार करनेवाले सम्राट सगर इश्वाकुवंशी ही तो थे। उन्हीं के नाम पर मेरा नाम भी सागर जो पड़ा है। इसलिए मैं मार्ग मध्य में हनुमान को थोड़ा विश्राम दिलाऊँगा जिससे वह थके नहीं।"

यों सोचकर समुद्र ने मैनाक नामक पर्वत से कहा—"मैनाक! तुम्हें इंद्र ने आदेश दिया था कि पाताल के राक्षसों के ऊपर आने से रोक रखे। अब तुम्हें पानी के तल से ऊपर बढ़ना है। हनुमान तुम्हारे ही रास्ते के ऊपर जा रहा है। तुम्हें पार कर जाने के पहले ही तुम अपने स्वर्ण शिखरों को जल के ऊपर बढ़ाओ और ऐसा प्रबंध करो जिससे हनुमान थोड़ी देर विश्राम कर सके।"

तत्काल ही मैनाक पर्वत जल के ऊपर बढ़ता गया। देखने में वह ऐसा लगता था मानो पूर्वी सागर से ऊपर उठनेवाले उदय सूर्य हो! अपने मार्ग में पर्वत के बढ़ते देख हनुमान ने सोचा कि उसके मार्ग में वह विघ्न डालना चाहता है। इसी भ्रम में पड़कर हनुमान ने इस पर्वत के शिखर को अपने वक्ष से एक धक्का देकर गिरा दिया।

हनुमान के अपार बल पर मुग्ध हो मैनाक मानव के रूप में पर्वत के शिखर पर प्रत्यक्ष हो बोला–"हनुमान! तुम्हारे बल की मैं किन शब्दों में प्रशंसा करूँ? समुद्र को लांघना किसी भी प्राणी के लिए भी संभव नहीं है, फिर भी तुम समुद्र को लांघते हुए अपने बल के बूते मुझको गिरा सके। तुम थोड़ी देर विश्राम करो। समुद्र ने श्रीरामचन्द्र के पूर्वज सगर के द्वारा तथा उनके पुत्रों के द्वारा भी अत्यंत उपकार पाया है। इस कारण समुद्र रामचन्द्रजी के कार्य पर जानेवाले तुम्हारा समुचित रूप से सत्कार करके सगरवंश के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहते हैं। इसलिए तुम थोड़ी देर यहाँ पर विश्राम करके अपने रास्ते चले जाओ।"

मैनाक ने हनुमान से आगे यों कहा– "वायुदेव के पुत्र के रूप में भी मुझे तुम्हारी पूजा करनी है। इसका एक कारण भी है। कृत युग में पर्वतों के पंख होते थे। ऋषि तथा देवता यह सोचकर डरते थे कि कहीं हवा में उड़ते समय वे पंख नीचे न गिर जाय! यह बात जानकर इन्द्र ने अपने वज्रायुध के द्वारा अनेक सहस्त्रों पर्वतों के पंखों को काट डाला है। वह मेरे भी पंखों को काटने आ रहे थे, तब वायुदेव ने मेरी रक्षा करने के ख्याल से मुझे दूर ढकेला और समुद्र में गिरा दिया। इस प्रकार मैं वायुदेव का ऋणी बना हुआ हूँ। इसलिए तुम मेरा आतिथ्य स्वीकार करो। तुम्हें देखने पर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है।"

अमर वाणी

य एव नैव कुप्यंते,
न लुभ्यंति तृणेष्वपि,
तएव नः पूज्यतमाः
येचापि प्रियवादिनः ॥ १ ॥

[जो क्रोध नहीं करते, जो लोभ नहीं रखते और उत्तम भाषण करते है, वे हमारे लिए पूजनीय हैं ।]

य स्समुत्पतितम् क्रोधम्
क्षम यैव निरस्यति
यथोरगस्त्स्वचम् जीर्णाम्
स वै पुरुष उच्यते ॥ २ ॥

[जो व्यक्ति क्रोध को सहनशीलता के द्वारा, सांप के केंचुली को त्यागने के समान त्याग देता है, वही सच्चा मानव है ।]

क्षमा शस्त्रम् करे यस्य
दुर्जनः किम् करिष्यति?
अतृणे पतितो वह्निः
स्वयमे वोपशाम्यति ॥ ३ ॥

[जिसके पास क्षमा रूपी हथियार है, दुर्जन व्यक्ति उसका क्या बिगाड़ सकता है? जिस स्थान पर घास न हो, वहां पर गिरनेवाली चिंगारी अपने आप बुझ जाती है ।]

Photo by M. Natarajan
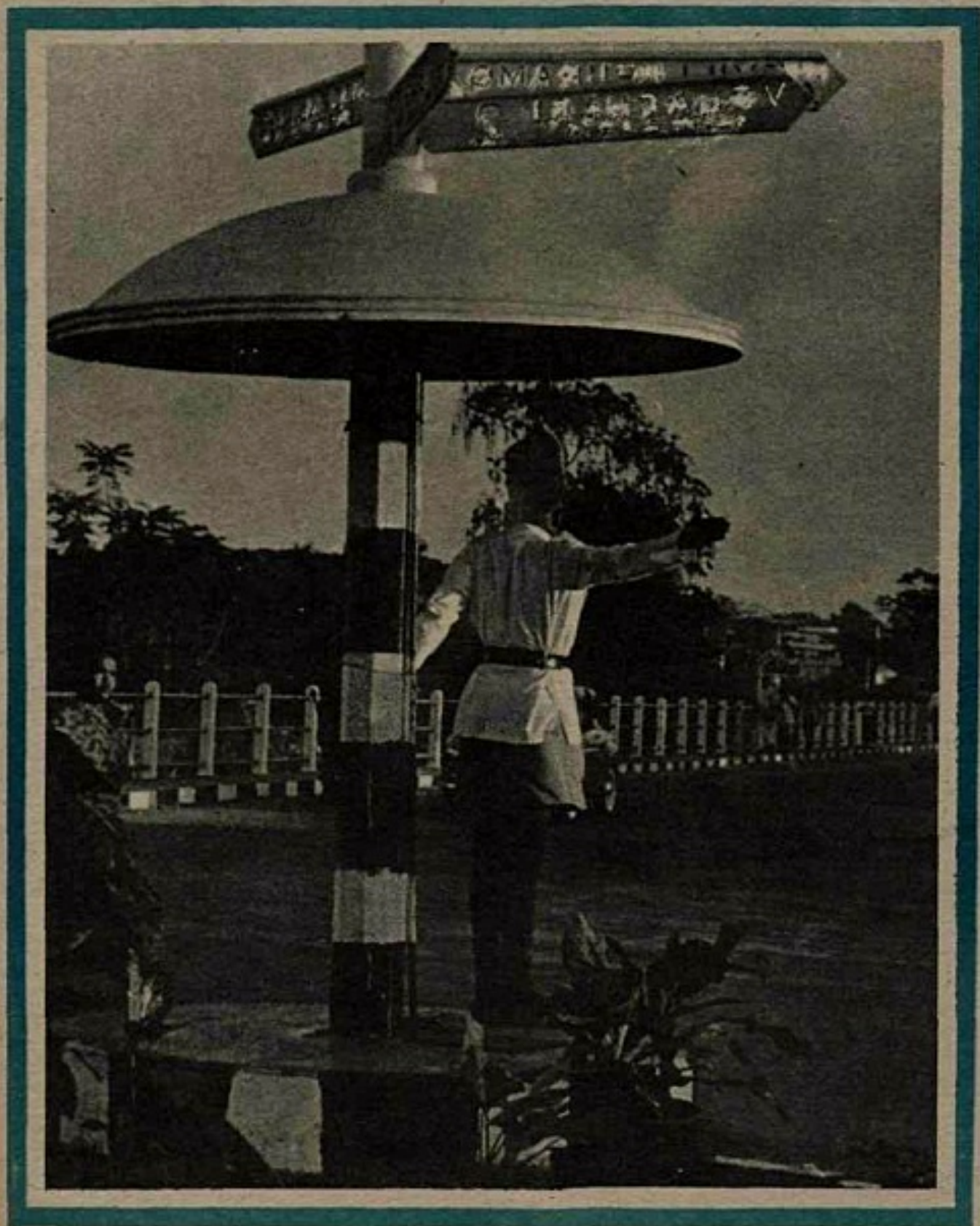
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

आवागमन पर नियंत्रण

प्रेषक :
तेजेश्वर

Chandamama, August 1975

Photo by M. Natarajan

धर्मराज कोविल स्ट्रीट, मद्रास-२६

नियंत्रित सामूहिक गान

पुरस्कृत परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ अगस्त १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अक्तूबर के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा आवरण पृष्ठ:
प्रतिबिम्ब

तीसरा आवरण पृष्ठ:
पाद स्नान

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

स्कूल के लिए
बाटा के
जूते
Bata
डिम्पल ६५
साईज ८-११,
१२-१, २-५
पोमीरेल १७
साईज ८-११,
१२-१, २-५
जूनियर ७३
साईज ७-१०,
११-१, २-५
कमिट ७३
साईज ८-११.१/२,
१२-१.१/२, २-५

Photo by: **K. K. RAO**

PUT DOWN THE BABY

मित्र-भेद